भूमिका

कहानी मानव-जीवन का महत्त्वपूर्ण अंग है। मानव-समाज से निकटतम सम्पर्क होने के कारण हिन्दी-साहित्य-क्षेत्र के अन्तर्गत इस विधा ने अतीव गरिमा एवं लोकप्रियता प्राप्त की है। मुं० प्रेमचन्द ने अपनी मौलिक प्रतिभा द्वारा मानव-जीवन का सूक्ष्म अध्ययन प्रस्तुत कर हिन्दी-कथा-साहित्य को इतना महत्त्वपूर्ण बना दिया कि उनके पूर्ववर्ती और समकालीन कथाकार सामान्य पाठक की दृष्टि से प्राय: ओझल से हो गये। पंडित विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक' को भी इसी उदासीनता का शिकार होना पड़ा। हिन्दी-आलोचना के पिछले दो दशकों में 'कौशिक' जी के विषय में लेख, समीक्षाएँ एवं टिप्पणियाँ तो उपलब्ध हो जाती हैं परन्तु पुस्तकाकार सर्वांगीण विवेचन प्राप्त नहीं होता। लेखों की संख्या भी उँगलियों पर गिनी जा सकती है। 'कौशिक' जी द्विवेदी-युग के प्रारम्भिक तथा प्रमुख लेखक थे। उन्होंने हिन्दी-कथा-साहित्य को एक नवीन दिशा प्रदान की और आगामी कहानीकारों का मार्ग-दर्शन किया। आप न केवल कहानीकार थे, वरन् उपन्यास के क्षेत्र में भी आपने प्रवेश किया और 'माँ' तथा 'भिखारिणी' नामक प्रसिद्ध उपन्यासों का सृजन किया, जिनमें उच्च-कोटि की भावनाभिव्यक्ति हुई है। 'कौशिक' जी का मूल रचना-क्षेत्र कहानी ही रहा—यही कारण है कि कहानीकार के रूप में इन्हें विशेष ख्याति मिली। इनका कथा-साहित्य हिन्दी-साहित्य के विकास-पथ पर प्रकाश-स्तम्भ की भाँति आगामी कलाकारों का मार्ग-प्रशस्त करता रहेगा।

जिस व्यक्ति का साहित्य के विकास एवं उत्थान में विशिष्ट योगदान रहा और जो एक युग का सूत्रधार रहा, उसकी उपेक्षा मार्जनीय नहीं है। इसी विचार को दृष्टि में रखकर मैंने यह कर्त्तव्य समझा कि प्रबन्ध रूप में इस महान् साहित्य-निर्माता के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का सम्यक् विश्लेषण प्रस्तुत करूँ। प्रस्तुत प्रबन्ध में 'कौशिक' जी के सम्पूर्ण कथा-साहित्य का मूल्यांकन एवं विवेचन प्रस्तुत करने का लघु प्रयास है। यहाँ विश्लेषण एवं समीक्षा परस्पर पूरक बन गये हैं। प्रबन्ध का प्रथम अध्याय 'कौशिक' जी के जीवन-वृत्त एवं प्रेरणास्रोत से सम्बन्धित है। द्वितीय

अध्याय में 'कौशिक'-पूर्व-हिन्दी-कथा-साहित्य पर सांकेतिक प्रकाश डाला गया है तृतीय अध्याय में वर्गीकरण की दृष्टि से 'कौशिक' जी की कहानियों का मूल्यांकन करते हुए, उनकी वर्गगत विशेषताओं के आधार पर, कुछ प्रतिनिधि कहानियों का परिचय दिया गया है। चतुर्थ अध्याय में रचना-विधान अथवा रूप-विधान की दृष्टि से 'कौशिक' जी की कहानियों की विवेचना करते हुए लेखक की कहानी-कला पर प्रकाश डालने की चेष्टा की गई है। अन्तिम अध्याय में उपसंहार के रूप में 'कौशिक' जी के कथा-साहित्य की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए संक्षिप्त मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है।

प्रबन्ध रचना के हेतु जिन विद्वानों से मैंने प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से विचार, भाव एवं अनुकूल सामग्री प्राप्त की, उनके प्रति मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ। श्रीमती डॉ० कैलाश प्रकाश—प्राध्यापिका इन्द्रप्रस्थ कालेज—के निर्देशन में मैंने इस कार्य को पूर्ण किया है। जिस अपरिमित स्नेह एवं अपूर्व तन्मयता के साथ उन्होंने मेरे इस कार्य में सहयोग दिया, वह मेरे लिए सौभाग्य की बात है।

बसंत पंचमी
संवत् २०२४।

सुमित्रा शर्मा एम० ए०
(दिल्ली विश्वविद्यालय)

विषय-सूची

प्रथम अध्याय

जीवन-वृत्त तथा प्रेरणा-स्रोत

किसी साहित्यकार के साहित्य का मूल्यांकन करने से पूर्व उसके पारिवारिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन, आन्तरिक एवं बाह्य प्रेरणा-स्रोतों से सम्बन्धित समकालीन परिस्थितियों और विचारधाराओं का परिचय प्राप्त कर लेना युक्ति-संगत होगा। आधारभूत परिस्थितियों घटनाओं और सम्पर्कों के ज्ञान से लेखक की प्रेरणाओं, अनुभूतियों तथा चिन्तन-दिशाओं में प्रवेश सम्भव हो जाता है। ये परिस्थितियाँ, घटनाएँ और सम्पर्क लेखक के विचारों और भावनाओं को दिशा प्रदान करते हैं, उसके मानस-पटल पर स्मृति की रेखाएँ अंकित करते हैं, वे धुंधले और स्पष्ट चित्र निर्मित करते हैं, कालान्तर में जिनके रंग उसकी रचनाओं में निखर उठते हैं। लेखक की प्रेरणा के आलम्बन स्वरूप ये घटनाएँ और परिस्थितियाँ आदि वे मूर्त आकार धारण कर उसका मार्ग निर्दिष्ट करती हैं जिनकी अभिव्यक्ति साधारणीकरण द्वारा उसके साहित्य की मूल विषय-वस्तु बनकर पाठकों तक पहुँचती है। बाह्य प्रभाव आन्तरिक शक्तियों को उद्वेलित कर अन्तर्द्वन्द्व को जन्म देते हैं, जिससे जीवन में गति का संचार तथा विकास का मार्ग उन्मुक्त होता है। द्वन्द्वात्मक विकास इन्हीं परिस्थितियों तथा घटनाओं से जन्म लेकर साहित्यकार के विचारों और भावनाओं को पुष्ट करके उसके व्यक्तित्व का निर्माण करता है। यही व्यक्तित्व लेखक के साहित्य की आधारशिला बनकर उसके रचनात्मक निर्माण में सहायक होता है।

हिन्दी के सुप्रसिद्ध कहानीकार पण्डित विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक' के कथा-साहित्य का अध्ययन प्रस्तुत करने से पूर्व उनके जीवन-सम्बन्धी उन घटनाओं तथा समकालीन परिस्थितियों पर एक दृष्टि डाल लेना अनावश्यक न होगा जिनका इनके व्यक्तित्व के निर्माण में महत्वपूर्ण योग रहा और जिनके सजीव चित्र इनके साहित्य की अमूल्य-निधि बनकर इनकी रचनाओं में यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं। 'कौशिक' जी का जन्म १८९१ चैत्रवदी प्रतिपदा को[1] अम्बाला छावनी में हुआ। इनके पिता पण्डित

---

१ "अपनेराम की पैदाइश ठीक चैत्रवदी प्रतिपदा की है।"—'दुबे जी की चिट्ठियाँ', विश्वानन्द दुबे, पृष्ठ १८६।

हरिश्चन्द्र 'कौशिक', गंगोह—(जिला सहारनपुर) निवासी अम्बाला छावनी में सैनिक स्टोरकीपर के पद पर कार्य करते थे।

चार वर्ष की आयु में 'कौशिक' जी को इनके चचा पण्डित इन्द्रसेन ने गोद ले लिया और अपने साथ कानपुर ले गये। इन्द्रसेन जी कानपुर में वकालत करते थे और उनकी आर्थिक स्थिति बहुत सुदृढ़ थी। 'कौशिक' जी का पालन-पोषण तथा शिक्षण कानपुर में ही हुआ, परन्तु विद्यालय की शिक्षा में यह मैट्रिक से आगे न बढ़ सके। इसके दो प्रमुख कारण थे—प्रथम इनकी विद्यालय की शिक्षा के प्रति अरुचि तथा दूसरा उत्तराधिकारस्वरूप पर्याप्त सम्पत्ति की प्राप्ति। आर्थिक सम्पन्नता के कारण जीवन-यापन के निमित्त विद्यालय की शिक्षा से माथापच्ची करना इन्हें अनावश्यक प्रतीत हुआ। अतः इन्होंने विद्यालय की शिक्षा का परित्याग कर स्वतन्त्र अध्ययन को लक्ष्य बनाया और अंग्रेजी, संस्कृत, उर्दू तथा बंगला में न केवल अच्छी गति ही प्राप्त की वरन् उनके ग्रन्थों का हिन्दी में अनुवाद भी किया।[1]

प्रेरणा-स्रोत तथा कथा-साहित्य में प्रवेश

मनुष्य को किसी कार्य में प्रवृत्त करने वाले मुख्य प्रेरणा-स्रोत दो हैं, आन्तरिक तथा बाह्य। इनका अन्योन्याश्रित सम्बन्ध होता है, जो समय-समय पर मनुष्य की भावना, कल्पना, विचारों तथा कार्य-कलापों को प्रभावित करता है। आन्तरिक प्रेरणा-स्रोतों के अन्तर्गत व्यक्तिगत स्वभाव तथा चिंतन महत्वपूर्ण हैं जिनसे प्रेरणा प्राप्त कर मनुष्य बाह्य जगत से अपना सम्पर्क स्थापित कर, उसके विभिन्न रूपों से प्रभावित होता है। बाह्य प्रेरणा-स्रोतों में मनुष्य के बाहरी जीवन से सम्बन्धित घटनाएँ एवं समकालीन परिस्थितियाँ अपना विशिष्ठ स्थान रखती हैं। 'कौशिक' जी की साहित्यिक प्रेरणा के स्रोत ये ही दो क्षेत्र रहे :—

१. आन्तरिक प्रेरणा-स्रोत—व्यक्तिगत स्वाभाविक एवं चारित्रिक गुण।
२. बाह्य प्रेरणा-स्रोत —नाटक कम्पनियाँ, अन्य भाषाओं का साहित्य, पत्र-पत्रिकाएँ, मित्रमंडली, समकालीन आन्दोलन तथा परिस्थितियाँ।

'कौशिक' जी चिन्तामुक्त, विनोदप्रिय, भावुक तथा स्वाभिमानी व्यक्ति थे। सम्पन्न परिवार के उत्तराधिकारी बनकर आर्थिक चिन्ताओं से मुक्त होने के परिणामस्वरूप बाल्यकाल से ही इनकी प्रकृति ऐसे साँचे में ढली, जिसमें चिन्ता के लिए

---

१ 'कत्ताव्यार का परिणाम', 'मौसम' (सं० १९७८) हिन्दू, शिक्षा (सं० १९७०)।

कोई स्थान न था। इन्होंने गृहस्थ की साधारण चिन्ताओं को पत्नी के हाथों में सं कर स्वयं को उससे मुक्त कर लिया था। इस विषय में 'दुबे जी की डायरी' में स्पष्ट संकेत करते हुए इन्होंने लिखा है—"अपने राम का हिसाब-किताब से सदा असहयोग रहा है। अपने राम ऐसे शुष्क और नीरस विषय के पास भी नहीं फटकते। यहाँ तक कि घर की आमदनी और खर्च का हिसाब-किताब भी लल्ला की महतारी के जिम्मे है। अपने राम उस ओर से बेफिक्र हैं।"[१]

आर्थिक तथा पारिवारिक चिन्ताओं की सुलभ मुक्ति और सम्पन्नता ने 'कौशिक' जी के स्वभाव को सरलता, भावुकता और विनोदप्रियता प्रदान की। इनका भारी-भरकम शरीर भी इनकी विनोदप्रिय प्रकृति के अनुकूल था। शम्भूनाथ सक्सेना लिखते हैं—"कौशिक' जी की तोंद उनके मदन का विश्लेषण है, जिसका विकास साहित्य में विजयानन्द चौबे के रूप में हुआ है। सिर के बाल खिचड़ी हो गये हैं, लेकिन वही राग-रंग का जीवन है। उनके जीवन के साथ ही उनका कलाकार भी रस प्रधान है।"[२] इनका अधिकांश साहित्य इसी विनोदशील प्रवृत्ति से प्रभावित है। 'चोर संघ', खिलावन काका', 'रेलयात्रा', 'एप्रिल फूल', 'लाला की होली' और 'मुन्शी जी का ब्याह' इत्यादि कहानियों में इस प्रवृत्ति की स्पष्ट झाँकी मिलती है।

'कौशिक' जी के स्वभाव का एक विशेष गुण था, स्वाभिमानपूर्ण स्वच्छन्द विचारधारा। अपने स्वाभिमान पर तनिक-सी ठेस लगते ही यह तिलमिला उठते थे। कलाकारोचित सम्मान के प्रति यह जीवन में सदैव जागरूक रहे तथा चाटुकारिता को घृणास्पद समझा। जीवन में कभी किसी ऐसे व्यक्ति की प्रशंसा इन्होंने नहीं की जिसके लिए इनकी आत्मा ने गवाही नहीं दी। स्पष्टवादी होने के कारण यह खरी बात कहते थे और इस बात की चिन्ता नहीं करते थे कि कोई उनसे प्रसन्न होता है अथवा अप्रसन्न। किसी की अनुचित बात को यह सहन नहीं करते थे। निम्नलिखित पंक्तियाँ इनकी इसी विशेषता की ओर संकेत करती हैं.—

(क) "अपने राम किसी से दबकर रहनेवाले जीव नहीं।"[३]

(ख) "अपने राम नाक पर मक्खी नहीं बैठने देते।"[४]

---

१ 'दुबे जी की डायरी'—विजयानन्द दुबे, पृष्ठ ३२।
२ उद्धृत 'हिन्दी कहानी और कहानीकार'—प्रो० वासुदेव पृ० १११-११२।
३ 'दुबे जी की चिट्ठियाँ'—विजयानन्द दुबे, पृष्ठ११२।
४ ,, ,, पृष्ठ १८।

सत्य और उचित के प्रति आग्रह तथा असत्य
इनका स्वभाव था। स्वप्रशंसा के प्रति इनका किंचित
अपनी व्यर्थ प्रशंसा सुनकर यह खीज उठते थे। अपने जी
में प्रचारात्मक दृष्टिकोण को इन्होंने कभी नहीं अपनाया
स्वान्तः सुखाय होता था। रामप्रकाश दीक्षित जी के
उनकी हॉबी थी। अतएव वह प्रचार से बचकर एकान्त में
रहते थे और फालतू समय में यार-दोस्तों के साथ हास्य-विनोद
रहते थे। कार्य-तत्परता और मस्ती उनके व्यक्तित्व के प्रधान
पार्जन के उद्देश्य को लेकर इन्होंने कभी कोई रचना नहीं की
मस्तमी के कारण इनकी बहुत सी रचनाएँ यत्र-तत्र बिखरी
संकलित करने का इन्होंने कभी प्रयास नहीं किया। इस विषय
उपन्यासकार श्री भगवती चरण वर्मा लिखते हैं,—"कौशिक जी
कलाकार थे, अपने हितों और ख्याति के प्रति अति लापरवाह,
हुआ कि उनका अधिकांश साहित्य बिखरा हुआ और खोया हुआ

स्वच्छन्द प्रकृति के इस कलाकार में नवीनता के प्रति विशेष
'दिवाली', 'दशहरा, तथा 'जन्माष्टमी' इत्यादि कहानियों में इन्हों
रिवाजों के परित्याग तथा नवीनता की माँग की है। लेखक के नवीन
आग्रह ने रूढ़िवादिता पर करारी चोट की है जो इनकी स्वच्छन्द प्र
है। उक्त सभी स्वाभाविक आन्तरिक विशेषताओं ने गुप्त रूप से इनके
जीवन को प्रेरणा प्रदान की। साहित्यिक दिशा में आकृष्ट होकर यह
के सम्पर्क में आए और राधेश्याम कथावाचक के साथ कुछ दिनों तक
में कार्य किया।

रंगमंचीय नाटककारों तथा कथाकारों पर विशेषतः उर्दू का प्रभाव
बम्बई में आने के फलस्वरूप 'कौशिक' जी की साहित्यिक प्रतिभा का प्रादु
लेखन के रूप में हुआ और इन्होंने 'शाकिर' उपनाम से उर्दू में कविता करनी
की। धीरे-धीरे हिन्दी की ओर इनका आकर्षण बढ़ा और सन् १९०८ में उर्दू
का परित्याग कर सन् १९११ से हिन्दी में लेखन-कार्य प्रारम्भ कर दिया।

नाटक-कम्पनियों का वातावरण 'कौशिक' जी जैसे स्वाभिमानी कलाकार के लिए उपयुक्त सिद्ध नहीं हुआ। फलतः इस क्षेत्र का परित्याग कर इन्होंने विशुद्ध साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण किया। विभिन्न भाषाओं के अध्ययन ने इनके स्वतन्त्र साहित्य-सृजन को नवीन प्रेरणा तथा दिशा प्रदान की। साहित्य की नाटक, उपन्यास आदि अन्य विधाओं में भी इन्होंने रचनाएँ की परन्तु मूल रचना-क्षेत्र कहानी ही रहा। इनकी कहानियाँ कानपुर के स्थानीय साप्ताहिक पत्र 'जीवन' में प्रकाशित होती थीं। दो-तीन लेख 'सरस्वती' पत्रिका में भी प्रकाशित हुए। उसी समय से इनका परिचय आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी से हुआ, जिन्होंने इन्हें बंगला का 'षोडशी' नामक कहानी-संग्रह दिया और उसमें से एक कहानी का अनुवाद करने का आग्रह किया। इन्होंने 'तिरोध' नामक कहानी का अनुवाद किया। इनकी सर्वप्रथम मौलिक रचना 'रक्षा-बन्धन' सन् १९१३ में 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई। तत्पश्चात् यह निरंतर हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ भेजते रहे। समकालीन पत्र-पत्रिकाओं से 'कौशिक' जी को साहित्य-सृजन की प्रेरणा मिली।

स्वाभाविक प्रवृत्तियों, नाटक-कम्पनियों और पत्र-पत्रिकाओं के अतिरिक्त साहित्य-सृजन के मूल प्रेरणा-स्रोतों में उन पात्रों का उल्लेख भी महत्वपूर्ण है जिनसे प्रभावित होकर 'कौशिक' जी ने उनके चरित्रों को रचनाबद्ध किया। इस क्षेत्र में इनकी मित्र-मंडली का विशेष महत्त्व है, जिसमें ये बैठते थे तथा वार्तालाप में महत्वपूर्ण प्रसंगों से प्रभावित होकर साहित्यिक अभिव्यक्ति की दिशा में क़दम उठाते थे। देवी प्रसाद धवन 'विकल' ने लिखा है—" वह जिन सभा-सोसायटियों, कविसम्मेलनों तथा सामाजिक गोष्ठियों में जाते थे वहाँ आलोचक की ही दृष्टि लेकर बैठते थे।···उनकी इस आलोचक दृष्टि ने जो कुछ देखा तथा उनकी लेखनी ने अभिव्यक्त किया वह देश और समाज के लिए निश्चित रूप से कल्याणकारी सिद्ध हुआ।"[१] इस कथन से स्पष्ट है कि इन्हें यथार्थवादी परिस्थितियों से ही विशेष रूप से प्रेरणा प्राप्त हुई, काल्पनिक परिस्थितियों से नहीं। डॉ॰ परमानन्द श्रीवास्तव के अनुसार 'कौशिक' जी के युग की कहानियों के "सृजनकर्त्ताओं की प्रेरणा का स्रोत सामाजिक तथा व्यावहारिक मनोविज्ञान है।[२] पारिवारिक जीवन का 'कौशिक' जी को विशेष ज्ञान था, अतः भारतीय परिवार का इन्होंने जो सर्वांगीण चित्रण किया है वह हिन्दी-साहित्य

१ 'दुबे जी की डायरी'——विजयानन्द दुबे, पृष्ठ २ [ये डायरी के पृष्ठ]।
२ 'हिन्दी कहानी की रचना प्रक्रिया'—पृष्ठ ९९।

महिला ऐसोसियेशन आदि ने हिन्दी कहानीकारों को यथेष्ट प्रेरणा दी।"[१] इन सुधारवादी संस्थाओं तथा राजनीतिक आन्दोलनों में 'कौशिक' जी का साहित्यकार रचना-क्षेत्र में सक्रिय हुआ। आर्यसमाज के विशेष प्रभाव ने इनके सुधारवादी दृष्टिकोण को अत्यधिक सुदृढ़ किया। यथार्थवादी सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों से प्रेरित होकर यह कथा-साहित्य में अवतीर्ण हुए और यथार्थ जीवन की आदर्शमय अभिव्यक्ति की। रूढ़िवादी परम्पराओं और मूर्तिपूजा में अविश्वास रखते हुए इन्होंने सनातन धर्मियों की मूर्तिपूजा तथा उनके तैंतीस करोड़ देवताओं की घोर निन्दा की है :—

"आजकल के कुछ लोग, जिनके दिमाग में ईश्वर की दया से भूसे का अंश कुछ आवश्यकता से अधिक बढ़ गया है, जिसे सनातनधर्म मानते हैं,···ऐसा गरीब परवर···ढोंगी परवर धर्म बड़े भाग्य से मिलता है और इसका धर्माचार्य बनने के लिए तो लाखों वर्ष तपस्या करने की आवश्यकता है। इस धर्म ने ईश्वर को टके पसेरी करके छोड़ दिया है। वाह रे धर्म! इस धर्म की बदौलत ईश्वर, राम, कृष्ण गली-गली जूतियाँ चटकाते घूमते हैं; उन्हें कोई टके को नहीं पूछता।... इस धर्म के सब अवलम्बी हाथ के कारीगर ठहरे—ईश्वर बनाना उनके बाएँ हाथ का खेल है। ज़रा-सी मिट्टी उठाई और ईश्वर तैयार; ज़रा सा पत्थर उठाया और ईश्वर मौजूद।"[२]

"कौशिक' जी के विचारों, समकालीन जीवन की समस्याओं तथा उनके पात्रों की सजीव झाँकी उनकी रचनाओं में दृष्टिगत होती है। 'वोटर', 'अहिंसा', 'कम्यूनिस्ट सभा', 'देश-भक्ति', 'पेरिस की नर्तकी', 'लीडरी का पेशा', 'पाकिस्तान', 'राशन-कार्ड', 'हिन्दुस्तानी', 'स्वयंसेवक', इत्यादि वे कहानियाँ हैं जिनमें राजनीतिक समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है तथा समकालीन राजनीतिक आन्दोलनों से प्रभावित होकर, उनसे सम्बन्धित व्यंग्यपूर्ण और गंभीर दोनों प्रकार के चित्र प्रस्तुत किये गए हैं। पात्रों के चरित्र-चित्रण में लेखक ने समकालीन विचारधाराओं को मुखरित किया है।

सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन ने 'कौशिक' जी के कहानी-साहित्य को विशेष रूप से प्रेरणा प्रदान की। इनका युग समाजसुधार का युग था, और 'कौशिक' जी अपने युग की इसी प्रवृत्ति से ही अधिक प्रभावित हुए। राजनीतिक उथल-पुथल तथा

---

१ 'हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन' पृष्ठ—१३१-१४०।
२ 'दुबे जी की चिट्ठियाँ'—पृष्ठ २३-२४।

आन्दोलनों का चित्रण इन्होंने विशेषतः 'दुबे जी की डायरी' और 'दुबे जी की चिट्ठियाँ' में किया है। कथा-साहित्य में अधिकांशतः पारिवारिक जीवन की इतनी सजीव झाँकियाँ प्रस्तुत की हैं कि उनके अध्ययन से तत्कालीन सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन साकार हो उठता है। 'अबला', 'आत्मग्लानि', 'आत्मोत्सर्ग', 'ईश्वर का डर', 'उद्धार', 'खोटा बेटा', 'गरीब हृदय', 'गुण-ग्राहकता', 'चौबे से दुबे', 'यौवन की आँधी', 'रक्षा बन्धन', 'ताई', 'प्रकृति', 'नास्तिक प्रोफेसर', 'विधवा', 'प्रसाद', 'पथ-निर्देश', 'धर्म का धक्का', 'भक्त', 'भक्त की टेर', 'सुधार' इत्यादि कहानियों में 'कौशिक' जी की समकालीन सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना के दर्शन होते है।

'कौशिक' जी की कहानियों में व्यंगपूर्ण साहित्य का विशेष महत्व है, जिसमें सामाजिक कुरीतियों पर करारी चोट की गई है, रूढ़िवादिता, अन्धविश्वास तथा पौंगापंथियों की कलात्मक ढंग से पोल खोली गई है।

समकालीन परिस्थितियों से प्रेरणा प्राप्त होने के फलस्वरूप समसामयिक विचारधाराओं का प्रभाव 'कौशिक' जी के सम्पूर्ण साहित्य में दृष्टिगोचर होता है। वह अपने युग के प्रत्येक आन्दोलन के प्रति सजग थे। इस कथन की सत्यता इनकी कुछ कहानियों की समस्याओं तथा उनके पात्रों के चित्रण से स्पष्ट हो जाती है।

अपने राजनीतिक आन्दोलनों से प्रभावित होकर जो कहानियाँ लिखीं उनमें 'लीडरी का पेशा'[१] कहानी राजनीतिक नेताओं के जीवन का चित्र उपस्थित करती है तथा इसमें उनकी नेतागिरी पर तीखा व्यंग किया गया है। कहानी का प्रमुख पात्र पं० उमादत्त शुक्ल ऐसे ही नेताओं का प्रतिनिधि बनकर आता है जो लीडरी को पेशा समझकर जनता में अपनी धाक जमाने तथा आनन्द करने के प्रयत्न में लगा रहता है। उसकी स्थिति का वर्णन 'कौशिक' जी ने इस प्रकार किया है, "शुक्ल जी ने शहर के देशभक्तों में एक अच्छा स्थान प्राप्त कर लिया। शहर के कुछ धनवानों पर शुक्ल जी की अच्छी धाक जम गई। शुक्ल जी अब बाहर की सभाओं और सम्मेलनों में भी जाने लगे। कांग्रेस को भी अपने चरण-रज से पवित्र करने लगे। तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार आप जिला में चंदर ए कुएट थे, उसी प्रकार अपनी समझ में नेतृत्व में भी चंदर ए कुएट हो गए।"

'वोटर'[२] कहानी में अधिक धन के बल पर वोट क्रय कर कौंसिल का मेम्बर

---

१ 'कल्लोल' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ [illegible]
२ 'पथ-निर्देश' [कहानी-संग्रह] ,, पृष्ठ [illegible]

बनकर नाम कमाने के इच्छुक नेताओं का प्रतिनिधित्व करने वाले राजनारायण का यथार्थ चित्र उपस्थित किया गया है, जो अशिक्षित तथा अयोग्य होने पर भी धन के बल पर वोट खरीदना चाहता है।

'पाकिस्तान'[1] कहानी देश में फैली उस समय की हलचल का चित्र प्रस्तुत करती है जब राजनीतिक क्षेत्र में पाकिस्तान बनने का प्रश्न ज्वलन्त था। "गाँधी जी ने जिन्ना साहब का पाकिस्तान मंजूर कर लिया।" यह पंक्ति इसी सत्य की ओर संकेत करती है। यह कहानी उस युग के कुछ व्यक्तियों में पाकिस्तान बनने की स्वीकृति से उत्पन्न असन्तोष की भावना को व्यक्त करती है। कहानी के पात्र लखनऊ के मुसलमान हैं, जिनका कहना है, "हम तो नापाकिस्तान में ही भले हैं।··· हिन्दू कुछ हमें खा तो जायेंगे ही नहीं। बहुत से हिन्दू हमारे दोस्त और हमदर्द हैं।"

'संशोधन'[2] शीर्षक कहानी में 'कौशिक' जी ने इस युग में उठने वाली असहयोग आन्दोलन की लहर के प्रभाव से देशभक्ति के क्षणिक आवेश में आकर देशभक्त बनने वाले व्यक्तियों के जीवन पर प्रकाश डाला है, जो आवश्यकता पड़ने पर जनता से प्राप्त धन का उपयोग करने में भी नहीं चूकते। इसका प्रमुख पात्र पंडित राजनारायण यह सोचकर अपने मन को संतुष्ट करता है, "जब हम जनता की सेवा करते हैं तब हमें उसके धन के कुछ अंश को अपने व्यय में लाने का नैतिक अधिकार है।"

'पेरिस की नर्तकी'[3] कहानी में फ्रांस की राजनीतिक पराजय के कारण पर दृष्टि डाली गई है।

सामाजिक तथा सांस्कृतिक सुधारवादी आन्दोलनों के प्रभाव से रचित कहानियों में सामाजिक रीति-रिवाजों और पारिवारिक समस्याओं पर प्रकाश डाला है।

विधवा-विवाह के आन्दोलन का प्रभाव 'युग-धर्म'[4] कहानी पर मिलता है, जिसका एक पात्र आनन्दीप्रसाद अपने सम्बन्धियों की सम्मति के बिना ही, अपने मित्र मनोहरलाल की विधवा बहन कमला से विवाह करने का साहस करता है तथा कहता है, "मनुष्य को युग-धर्म के साथ चलना चाहिए।"

---

१ '[illegible]' [कहानी-संग्रह]—विशम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ १०३-१०४
२ 'कल्लोल' ,, ,, ८५-१०१।
३ 'पेरिस की नर्तकी' ,, ,, ८१-९९।
४ '[illegible]' ,, ,, ११७-१२८।

'अबला'[1] कहानी में स्त्री को अबला कहने की धारणा पर व्यंग करते हुए यह प्रमाणित करने का प्रयास किया गया है कि स्त्री अबला नहीं होती। 'बुद्धि-बल'[2] कहानी में दोनों सन्यासी का यथार्थ चित्र उपस्थित किया गया है। 'उद्धार'[3] कहानी में निर्धनों का शोषण करने वाले पूँजीपति वर्ग की प्रवृत्तियों का स्पष्ट चित्रण किया गया है। 'ढपोरशंख'[4] में हिन्दू-धर्म के आन्तरिक खोखलेपन पर विशेष रूप से प्रकाश डाला है। बाह्य आडम्बरों एवं अहंकारी पण्डितों के पाखण्डों का चित्रण प्रस्तुत किया गया है।

निष्कर्षतः 'कौशिक' जी ने जिस सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक जीवन से प्रेरणा प्राप्त की उसकी स्पष्ट झाँकी इनके साहित्य में मिलती है। इनके जीवन की संक्षिप्त झाँकी, विचार तथा साहित्यिक प्रेरणा-स्रोतों और उनसे सम्बन्धित समकालीन परस्थितियों एवं आन्दोलनों के प्रभावों की अभिव्यक्ति का अनुशीलन करने के पश्चात् जिस स्तर के साहित्य की कल्पना की जा सकती है उसमें यह साहित्यकार पूर्णरूपेण सफल हुआ। इनका कथा-साहित्य अपने युग का सजीव चित्र है, जिसमें हर चेतना निखरकर सामने आई है।

---

१ 'प्रतिशोध' [क० सं०]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ १२१-१३७।
[illegible] ,, ,, ४२-४८।
[illegible] ,, ,, २३-४०।
[illegible] की नर्तकी' ,, ,, १४५-१५५।

द्वितीय अध्याय

'कौशिक'-पूर्व हिन्दी-कथा-साहित्य

कथा कहना तथा सुनना मानव की स्वाभाविक विशेषता है। इसी प्रवृत्ति ने कथा-साहित्य को जन्म दिया। प्राचीन भारतीय साहित्य मे कथाओं का प्रचलन आदिम काल से दृष्टिगोचर होता है। ये कथाएँ प्रमुखतः घटनाप्रधान तथा मार्मिक तत्वों से युक्त होती थीं। कहानी की परम्परा वैदिक-सस्कृत, संस्कृत, पालि, प्राकृत और अपभ्रंश आदि में वेद, उपनिषदों, पुराणों इत्यादि मे से होती हुई चारण-काल और गाथा-काल तक विकसित होती चली आई। इस युग तक का कथा-साहित्य अपना ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। पौराणिक आख्यानों पर आधारित इस कथा-साहित्य में कल्पना की प्रचुरता है तथा कहानी का उद्देश्य केवल मनोरंजन रहा है। बीच में कहीं-कहीं उपदेशात्मक प्रवृत्ति प्रधान हो गई है तथा मनोरंजन गौण हो गया है। डॉ० परमानन्द श्रीवास्तव के शब्दों में—"पुरानी मौखिक कहानी का आडम्बर और कृत्रिम लाक्षणिक भाषा, इस युग की कहानी मे, स्वाभाविकता के विकास मे बाधक हुई है। इसी अपरिपक्वता को लक्ष्य कर इस काल की कहानी को "जन्मकाल" या "बाल्यकाल" का साहित्य या 'शैशवकाल का साहित्य' कहा गया है।"[1]

भारतेन्दु-युग से पूर्व कहानी के तत्वों का धीरे-धीरे विकास होता रहा। कहानी-रचना का माध्यम पद्य था, धीरे-धीरे गद्य के विकास के साथ-साथ गद्य में कहानियों की रचना की जाने लगी। इस युग के हिन्दी-गद्य-कथा-साहित्य के क्षेत्र में लल्लूलाल के 'प्रेमसागर' (१८०३-१८०९). सदलमिश्र के 'नासिकेतोपाख्यान, (१८०३ ई०) तथा सैयद इंशाअल्लाखां की 'रानी केतकी की कहानी' (सं० १८५५-१८६०) का विशेष महत्त्व है। 'प्रेमसागर' मे भागवत के प्रथम स्कन्ध पर आधारित कृष्ण-चरित्र का पौराणिक दृष्टि से वर्णन किया गया है। 'नासिकेतोपाख्यान' संस्कृत के नासिकेतोपाख्यान से अनूदित रचना मानी जाती है, जिसमे चन्द्रावली की कथा का वर्णन है। ये दोनो रचनाएँ पौराणिक शैली पर लिखी गईं। 'रानी केतकी की

---

१. 'हिन्दी कहानी की रचना-प्रक्रिया'-पृष्ठ ५६।

'कौशिक' जी का क

पहानी' १९ वीं शताब्दी की वह सर्वप्रथम रचना है, जिसे हिन्दी के अधिक
षकों ने हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी होने का श्रेय प्रदान किया है। इसक
वस्तु किसी पौराणिक रचना पर आधारित न होकर लेखक की मौलिक कल
उद्भूत है, ऐसी विद्वानों की मान्यता है।[1] इस कहानी का दूसरा नाम 'उ
चरित' है।

हिन्दी-कथा-साहित्य का वास्तविक आविर्भाव भारतेन्दु-युग में हुआ।
युग की कहानियाँ समय-समय पर अनेक समकालीन पत्र-पत्रिकाओं 'कविवचन सु
(सन् १८६७), 'हरिश्चन्द्र मैगज़ीन' (सन् १८७३), 'हरिश्चन्द्र-चन्द्रिका' (सन् १८७
'हिन्दी प्रदीप' (सन् १८७७), 'ब्राह्मण' (सन् १८८०), 'सारसुधा निधि' तथा 'भारत
मित्र' (सन् १८७७) आदि में प्रकाशित होती रहीं। राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्
की 'राजा भोज का सपना', राधाचरण गोस्वामी की 'यमलोक की यात्रा', भारतेन्दु
की 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न' आदि इस युग की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ हैं, जिनकी रचना
मौलिक कथानकों के आधार पर की गई है। स्वप्नलोक की काल्पनिक भित्ति पर
रचित इन कहानियों में उपदेशात्मकता के स्थान पर तीखे व्यंग्य का समावेश हुआ
है। इस युग की कहानी में आगामी कथा-साहित्य के परिवर्तन का आभास मिलता
है तथा आधुनिक हिन्दी-कहानी की पृष्ठभूमि के रूप में इस कथा-साहित्य का महत्त्व
सर्वोपरि है। इस काल में हिन्दी-कहानी की रूपरेखा निश्चित हो चली थी। अतः
"हिन्दी कहानी को समुचित शैली की ओर प्रेरित करने का श्रेय भारतेन्दु-युग को
अवश्य दिया जाना चाहिए।"[2]

आधुनिक कथा-साहित्य का, जिसका प्रचलन आरम्भ में अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाओं
में दृष्टिगोचर होता है, अनुकरण गल्प-विधा के क्षेत्र में बंगभाषी साहित्यकारों
ने किया। १९०० ई० में निकलने वाली 'सरस्वती' पत्रिका का हिन्दी-कहानी के
उद्भव और विकास की दृष्टि से विशेष महत्त्व है। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी के
शब्दों में "बीसवीं शताब्दी में जब 'सरस्वती' का प्रकाशन हुआ तभी वास्तविक अर्थों
में कहानी लिखना शुरू हुआ।" सन् १९०० से १९१० तक का काल हिन्दी-कहानियों

---

१. 'रानी केतकी की कहानी' की कथावस्तु का कोई प्राचीन लिखित आधार नहीं है। अतः यह
पूर्ण मौलिक रचना मानी जाती है।"—"हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन', डॉ०
ब्रह्मदत्त शर्मा, पृष्ठ ७१।

२. 'साहित्य और उसकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ'—डॉ० गोविन्दराम शर्मा, पृष्ठ १९०

का प्रयोगकाल कहा जा सकता है।"[१] इसमें दो प्रकार की कहानियों की रचना हुई—प्रथम अनूदित तथा दूसरी मौलिक कहानियाँ। आरम्भ में अधिकांशतः अनूदित कहानियों की रचना हुई जिनमें अत्यन्त मार्मिक तथा भावव्यञ्जक खण्डचित्रों की अवतारणा हुई। राधाकृष्णदास की 'सिम्बेलिन', पार्वतीनन्दन की 'बिजुली' और 'मेरी चम्पा', सूर्यनारायण दीक्षित की शेक्सपियर-कृत 'हेमलेट' नाटक की अनूदित कहानी, श्री चतुर्वेदी की 'भूल भुलैयाँ' आदि कहानियाँ अंग्रेजी से, जगन्नाथ त्रिपाठी की 'मुक्ति का उपाय', गदाधर सिंह की 'कादम्बरी', सूर्यनारायण दीक्षित की 'चन्द्रहास का अद्भुत उपाख्यान' आदि संस्कृत से तथा पार्वतीनन्दन की 'राजटीका', बंगमहिला की 'कुम्भ में छोटी बहू', भट्टाचार्य की 'राजपूतनी' आदि कहानियाँ बंगला से अनूदित होकर समय समय पर 'सरस्वती' पत्रिका मे प्रकाशित होती रही।

उक्त अनूदित कहानियों ने हिन्दी में मौलिक कहानी-कला के आविर्भाव में प्रेरणा प्रदान की, जिसके परिणाम स्वरूप इस युग मे अनेक मौलिक कहानियों की रचना हुई। १९०० ई० में किशोरीलाल गोस्वामी की 'इन्दुमती' कहानी सरस्वती के प्रथम भाग में प्रकाशित हुई, जिस पर कुछ विद्वानो ने शेक्सपियर के 'टेम्पेस्ट' नाटक का प्रभाव स्वीकार किया है। डॉ० सुरेश सिनहा ने इसे प्रथम मौलिक कहानी स्वीकार किया है तथा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार "यदि 'इन्दुमती' किसी बंगला कहानी की छाया नहीं है तो हिन्दी की यही पहली मौलिक कहानी ठहरती है।"[२] १९०१ में लाला पार्वतीनन्दन कृत 'प्रेम का फुहारा' सन् १९०२ में मास्टर भगवानदास कृत 'प्लेग की चुड़ैल', सन् १९०३ मे गिरिजादत्त वाजपेयी-कृत 'पति का प्रेम' तथा 'पंडित और पंडितानी', आचार्य रामचन्द्र शुक्ल-कृत 'ग्यारह वर्ष का समय', सन् १९०४ में महावीर प्रसाद द्विवेदी की 'स्वर्ग की झलक', सन् १९०५ मे निजामशाह कृत 'सुअर का शिकार', सन् १९०७ में बंग महिला की 'दुलाई वाली' तथा सन् १९०९ मे वृन्दावनलाल वर्मा की 'राखीबन्द भाई', मैथिलीशरण गुप्त की 'नकली किला', विद्यानाथ शर्मा की 'विद्या विहार, आदि प्रसिद्ध मौलिक कहानियाँ 'सरस्वती मे प्रकाशित हुई।

'कौशिक' जी ने सन् १९११ से हिन्दी मे रचना करनी आरम्भ की, इसलिए सन् १९१० तक का हिन्दी-कथा-साहित्य इनसे 'पूर्वकालीन हिन्दी-कथा-साहित्य'

---

१ 'हिन्दी साहित्य'—पृष्ठ ४२३-४२४।
२ 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—पृष्ठ ५०४।

के अन्तर्गत आता है। भारतेन्दु-युग तक हिन्दी में जिन कहानियों की रचना हुई उनका सम्बन्ध जीवन से बहुत कम तथा काल्पनिक जगत से अधिक है। आधुनिक युग में कहानी-कला के जो तत्व स्वीकार किये गए उनका समावेश उन कहानियों में न हो सका। ये कहानियाँ तिलस्म, जादू तथा कुतूहलपूर्ण विषयों से सम्बद्ध हैं तथा आकार में लम्बी हैं। उनकी रचना वर्णनात्मक शैली में हुई है तथा ब्रज, पूर्वी हिन्दी और खड़ी बोली की गद्य-पद्यमय भाषा का प्रयोग किया गया है। गद्य का रूप अत्यन्त अव्यवस्थित तथा अपरिमार्जित है। अतः भारतेन्दु-युग में कहानी-कला की उन्नति की दिशा में जो भी प्रत्यक्ष तथा परोक्ष प्रयत्न और प्रयोग किये गये इन समस्त प्रयत्नों एवं गद्यशैलियों से हिन्दी कहानी का कोई स्पष्ट तथा निश्चित रूप नहीं बन सका। हिन्दी-कहानी के आविर्भाव तथा आगामी कहानीकारों के मार्ग-प्रेरक के रूप में इस कथा-साहित्य का महत्व निस्सन्देह स्वीकार्य है।

द्विवेदी-युग में जिस कथा-साहित्य की रचना हुई वह हिन्दी-कहानियों का प्रयोग-काल था। इस युग की कहानियों का प्रधान लक्ष्य मनोरंजन था, जिसके लिए अनेक प्रकार की कुतूहलवर्धक घटनाओं को गुम्फित किया जाता था। अंग्रेजी से अनूदित कहानियों की रचना से "अंग्रेजी कहानी-कला का हिन्दी कहानीकारों पर यथेष्ट प्रभाव पड़ा है। उन्होंने अंग्रेजी कहानियों की प्रायः सब विशेषताओं को स्वीकार किया है।"[1] बंगला से अनूदित कहानियाँ संक्षिप्त आकार की हैं, जिनमें कहानीकारों का व्यक्तित्व भी बीच-बीच में उभरता रहता है। इनमें तत्सम ...हावरों से युक्त भाषा का प्रयोग किया गया। इस युग की मौलिक कहानियाँ ...की दृष्टि से मुख्यतः पाँच प्रकार की हैं :—(१) प्रेम तथा मनोरंजन प्रधान ...नियाँ, (२) ऐतिहासिक एवं पौराणिक कहानियाँ, (३) जासूसी और साहसप्र... कहानियाँ, (४) सामाजिक कहानियाँ, (५) पद्य-बद्ध उपदेशात्मक कहानियाँ। ... प्रधान कहानियों में प्राचीन प्रेम कथाओं की परम्परा का आभास मिलता है, ऐ...हासिक और पौराणिक कहानियाँ घटना प्रधान हैं तथा कल्पना का भी समुचि... प्रयोग इनमें किया गया है। जासूसी एवं साहसप्रधान कहानियाँ रचनाकला की दृ... से साधारण कोटि की हैं, केवल पाठकों के मनोरंजन के उद्देश्य को लेकर लिखी गई हैं। सामाजिक कहानियों में जीवन से सम्बन्ध स्थापित करने का कुछ प्रयत्न मिलता है। उपदेशप्रधान कहानियों में उपदेशात्मक प्रवृत्ति की प्रधानता रही है।

---

१ "हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन"—डॉ० ब्रह्मदत्त शर्मा, पृष्ठ १०१।

प्रयोगकालीन कहानियों का प्रधान उद्देश्य मनोरंजन रहा तथा इसकी रचना अन्य पुरुष की वर्णनात्मक शैली में हुई। हिन्दी कथा-शिल्प की दृष्टि से 'सरस्वती' पत्रिका के प्रथम दो वर्षों में कहानी के कुछ प्रारम्भिक प्रयोगों का विशेष महत्त्व है। 'इन्दुमती' कहानी की रचना अन्यपुरुष तथा वर्णनात्मक शैली मे हुई तथा केशव-प्रसाद सिंह की 'आपत्तियों का पर्वत' कहानी की रचना प्रथम पुरुष की शैली में हुई। "इसमें लेखक ने स्वप्न को एक अभिव्यक्ति का साधन मानकर कहानी के मनोरंजन को सामने लाने का प्रयत्न किया है।"[1] इस कहानी मे कौतूहल वृत्ति की प्रधानता है। इनकी यात्रा विवरण पर आधारित कहानी 'चन्द्रलोक की यात्रा' कल्पित विषय पर निर्मित मनोरंजन-तत्वों से परिपूर्ण है, कहानी के तत्व भी सफलता-पूर्वक आए हैं। इन कहानियों में काल्पनिक तथा यथार्थ घटनाओं का सुन्दर साम-ञ्जस्य स्थापित किया गया है। डॉ॰ ब्रह्मदत्त शर्मा के शब्दों में—"इनमें कहीं-कहीं यथार्थ जगत के निकट जाने का प्रयास किया गया है।"[2] समाज की गम्भीर तथा महत्वपूर्ण समस्याओं की ओर कहानीकारों का ध्यान नहीं गया, क्योंकि इनका प्रधान लक्ष्य पाठकों के समक्ष मनोरंजन की सामग्री उपस्थित करना रहा है। पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं के उद्घाटन की ओर इनका ध्यान बहुत कम गया है। सामाजिक जीवन के पारिवारिक पक्ष की अभिव्यक्ति का कुछ प्रयास इस युग के कथा-साहित्य में मिलता है, जिसमें आदर्शवाद की रक्षा की ओर कहानीकारों का विशेष ध्यान रहा है।

कहानी का मानव-जीवन से घनिष्ट सम्बन्ध होता है। मनुष्य का जीवन स्वयं एक कहानी है, जिसका प्रारम्भ उसके जन्म से तथा पर्यवसान मृत्यु में होता है। 'कौशिक'-पूर्व-युगीन कहानी का मानव-जीवन के साथ कोई विशेष सम्बन्ध नहीं हो पाया था। इस क्षेत्र में जो भी प्रयास किये गये वे असन्तोषजनक तथा निराशा-पूर्ण रहे। उनके द्वारा एक प्रकार की व्याकुलता तथा मजबूरी का आभास मिलता है जो आगे जाकर क्रियात्मक रूप में व्यक्त हुआ। इस युग में हिन्दी साहित्यकारों के समक्ष सर्वप्रमुख समस्या कहानियों के हेतु उपयुक्त वातावरण एवं पाठक-वर्ग तैयार करने की थी, इसलिए उन्होंने रोमांचकारी, कौतूहलपूर्ण तथा आश्चर्यक कलात्मक प्रसंगों को ही अपने कथा-साहित्य में स्थान दिया। हिन्दी कथा-साहित्य के मूल में

---

१ 'हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास',—डॉ॰ लक्ष्मीनारायण लाल, पृष्ठ ५४।
२ 'हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन' पृष्ठ १११।

समाज या धर्म को सुधारने की चेष्टा में ही कहानियों की रचना की, "पर चूँकि यह कहानियों का प्रारम्भिक युग था और हिन्दी कहानियों के भविष्य की उज्ज्वल पीठिका तैयार हो रही थी, इसलिए ये प्रयत्न अधिक महत्त्वपूर्ण सिद्ध न हो सके।"[1] वस्तुतः आगामी कथा-साहित्य की पूर्वपीठिका तथा प्रेरणा-स्रोत के रूप में इस कथा-साहित्य का अपना विशेष महत्त्व है।

"सन १९११ में 'इंदु' का प्रकाशन हुआ, जिसमें जयशंकर प्रसाद की संभवतः प्रथम कहानी 'ग्राम' प्रकाशित हुई। श्री गंगाप्रसाद श्रीवास्तव की प्रथम हास्य रस की कहानी 'पिकनिक' भी इसी साल प्रकाशित हुई और इन्हीं दिनों 'भारत मित्र' में पं० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की प्रथम कहानी 'सुखमय जीवन' भी छपी।[2]" प्रसाद अपने कथा-साहित्य में एक भिन्न भावमूलक आदर्शवादी विचारधारा को लेकर चले। इनके सभी काव्यरूपों में कल्पनातत्व की प्रधानता है, इसी वृत्ति के कारण इनकी प्रायः सभी कहानियाँ भावप्रधान हैं, जिनके विषय समाज, इतिहास तथा कल्पना तीनों धरातलों से ग्रहण किये गए हैं। प्रारम्भिक 'ग्राम' आदि कहानियों में कठोर यथार्थ का चित्रण करते हुए, शृंगारवादी भावना को व्यक्त किया है। ऐतिहासिक कहानियों में भारतीय संस्कृति के आदर्श तथा स्वर्णिम अतीत की प्रतिष्ठा करते हुए करुणा, बलिदान और उत्सर्ग की भावाभिव्यक्तियों से अतीत की धार्मिक, दार्शनिक और सामाजिक मान्यताओं को चुनौती दी है।[3] 'आकाशदीप', 'इन्द्रजाल', 'पुरस्कार', 'सालवती', 'नूरी', 'देवरथ' आदि इनकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं, जिनमें प्रेमपूरक भावनाओं की प्रधानता है। भावपक्ष की दृष्टि से इनकी कहानियाँ आनन्द और सौन्दर्य से परिपूरित, काल्पनिक तथा आदर्शोन्मुखी है। श्री गंगाप्रसाद श्रीवास्तव हास्यरस की कहानियों की एक अन्य धारा लेकर चले। चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' की कहानियों की संख्या कम है, फिर भी इनका हिन्दी साहित्य में विशेष स्थान है। 'सुखमय जीवन', 'बुद्धू का कांटा' तथा 'उसने कहा था' इनकी तीन प्रसिद्ध कहानियाँ

---

१. 'हिन्दी कहानी : उद्भव और विकास', डॉ० सुरेश सिनहा, पृष्ठ १८५।
२. 'हिन्दी साहित्य', डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ, ४२५।
३. 'हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास', डॉ० लक्ष्मीनारायणलाल, पृष्ठ ७२।

हैं जो सामाजिक चेतना से अनुप्राणित हैं। इनमें व्यक्ति, समाज एवं वर्ग, तीनों के आदर्शों का चित्रण किया गया है। 'गुलेरी' जी अपने कथा-साहित्य में भावमूलक आदर्शवादी धारा को लेकर चले। सन् १९१२ में प्रसाद की 'रसिया बालम' कहानी प्रकाशित हुई तथा इसके पश्चात् ज्वालाप्रसाद शर्मा की 'विधवा' तथा 'तस्कर' कहानियाँ प्रकाशित हुईं। विश्वम्भरनाथ 'कौशिक' की प्रथम कहानी 'रक्षा-बन्धन' सन् १९१३ में सरस्वती में प्रकाशित हुई।[1] इन्होंने अपने कथा-साहित्य में समाज-सुधारवादी प्रवृत्ति को अपनाते हुए जीवन की वास्तविक झाँकी प्रस्तुत की। प्रेमचन्द हिन्दी कहानी-कला के क्षेत्र में सन् १९१६ में अवतीर्ण हुए, । वैसे उर्दू कहानी-कला के क्षेत्र में इन्होंने प्रसाद तथा 'कौशिक' से पूर्व सन् १९०७ में ही प्रवेश कर लिया था। १९१६ ई० में इनकी प्रथम हिन्दी-कहानी 'पंचपरमेश्वर' प्रकाशित हुई।[2] इससे पूर्व उर्दू में इन्होंने लगभग १७८ कहानियों की रचना की, जो समय-समय पर उर्दू की प्रसिद्ध पत्रिका 'जमाना' में छपती रहीं। डॉ० ब्रह्मदत्त शर्मा के अनुसार इनकी प्रथम हिन्दी कहानी 'सौत' है, जो सन् १९१५ में 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई। 'कौशिक' जी की प्रथम कहानी 'रक्षाबन्धन' अक्टूबर "१९१६ (भाग १७ सं० ४ पृष्ठ २१५) में 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई।[3] इस दृष्टि से प्रेमचन्द ने 'कौशिक' से पूर्व हिन्दी कथा साहित्य में प्रवेश किया। प्रो० वासुदेव के अनुसार सन् १९१२ में 'कौशिक' जी की पहली मौलिक कहानी 'रक्षाबन्धन' 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई" हिन्दी संसार में 'कौशिक' जी प्रेमचन्द जी से पहले आये।"[4] इस विषय पर विद्वानों में मतभेद है। अतः इस विवाद में न पड़कर यह स्वीकार कर लेना उचित होगा कि १९१० के पश्चात् से हिन्दी-कहानियों का विकास-काल प्रारम्भ होता है, जिसके प्रतिनिधि कहानीकार चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी', जयशंकर प्रसाद, प्रेमचन्द, विश्वम्भरनाथ 'कौशिक' तथा जी० पी० श्रीवास्तव आदि हैं, जिनका कथा-साहित्य विकास-काल के अन्तर्गत आता है। इस युग में हिन्दी-कहानियों की चार प्रमुख धाराएँ चलीं—(१) समाज सुधारवादी कहानियों की धारा, (२) भाव प्रधान आदर्शवादी कहानियों की धारा, (३) हास्य रस की कहानियों की धारा तथा (४) भावमूलक यथार्थवादी कहानियों

---

१. 'हिन्दी साहित्य'—डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० ४२५।
२. 'हिन्दी साहित्य'—डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० ४२५।
३. 'हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन', पृ० १८४-२१६।
४. 'हिन्दी कहानी और कहानीकार', पृ० १३१-१३२।

की धारा। प्रेमचन्द के कथा-साहित्य में आदर्शोन्मुख यथार्थवादी प्रवृत्ति की प्रधानता रही।

'कौशिक' जी ने सर्वप्रथम हिन्दी कथा-साहित्य में चरित्र-प्रधान कहानियों की सृष्टि करते हुए अपने पूर्वयुगीन कथा-साहित्य के अभाव को पूर्ण किया, अपने युग में प्रमुख समाज-सुधारवादी एवं राजनीतिक आन्दोलनों को कथा-साहित्य में अभिव्यक्ति दी और मानव-जीवन के साथ सम्पर्क स्थापित करते हुए समाज के यथार्थ स्वरूप को उपस्थित किया। इनका पूर्वयुगीन कथा-साहित्य मानव जीवन तथा उसकी समस्याओं से दूर कल्पना लोक की वस्तु है, जिसमें कहीं-कहीं सामाजिक जीवन की छाया प्रतिभासित हो उठती है। 'कौशिक' जी ने जीवन में प्रवेश कर यथार्थ का निरीक्षण किया और अनेकों सामाजिक तथा पारिवारिक समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए उनका समाधान प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया। शिल्प की दृष्टि से भी इन्होंने कई महत्त्वपूर्ण प्रयत्न किये, हिन्दी-कहानी-कला में संवादात्मक शैली का सूत्रपात किया तथा पात्रों के चरित्र-चित्रण पर विशेष बल दिया। शुद्ध मनोरंजन के स्थान पर समाज-सुधारात्मक आदर्शवादी लक्ष्य को लेकर इन्होंने उच्च उद्देश्य प्रधान कथा-साहित्य की रचना की।

कहानी की लोकप्रियता

कहानी जीवन की वास्तविकता को प्रतिबिम्बित करके मानव-जीवन किसी संघर्षमय संवेदनात्मक पक्ष का उद्घाटन करती हुई जीवन के प्रगतिशील तत्त्वों का समावेश करती है तथा नवीन मानव-मूल्यों की स्थापना के साथ-साथ उन प्राचीन मूल्यों की खोज करती है जो परिवर्तनशील परिस्थितियों में मनुष्य के भावों की उन्नति के लिए अनिवार्य होते हैं। "मानव जीवन में कहानी का आदि स्थान है। ज्यों ही मनुष्य को बोलना आया होगा, उसी क्षण से किसी-न-किसी रूप में कथा-कहानी का आरम्भ हुआ होगा। कौतूहल और जिज्ञासा, अर्थात् क्यों, कैसे की स्वाभाविक प्रवृत्ति ने इसके जन्म में इतनी बलवती प्रेरणा दी होगी कि साहित्य के इस माध्यम ने बहुत ही शीघ्र मानव-समाज को अपने आकर्षण और अनिवार्यता की सीमा में बाँध लिया होगा।"[1]

काल्पनिक तत्त्व की प्रधानता तथा मानव-जीवन के वास्तविक रहस्यों के उद्घाटन के अभाव के कारण भारतेन्दु-युग तक कहानी समाज में अधिक लोकप्रिय

---

1. 'हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास'—डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल, पृ० ३६६।

न कर सकी। उस युग में छोटी-छोटी १०-१२ पृष्ठों की रचनाओं को स्वयं ों के द्वारा उपन्यास की संज्ञा दी जाती थी। इसका 'कारण एकमात्र यही था या तो 'कहानी' का प्रवेश साहित्यिक क्षेत्रों में नहीं हो पाया था और यदि हो या था, तो वह बहुत लोकप्रिय न हो सका था।"[1]

'कौशिक' जी के युग तक आते-आते उपन्यास और कहानी हिन्दी-गद्य-ह्य का प्रतिनिधित्व करने लगे। समकालीन प्रतिभासम्पन्न कलाकारों ने साहित्य के माध्यम से साहित्य के नूतन विकास-क्षेत्र में जो नवीन रचनाएँ त कीं उनमें समाज का स्वर मुखरित हो उठा। कथा-साहित्य में शैली तथा नक, विचार एवं भावना, सभी क्षेत्रों में कहानी के नवीनतम चित्र प्रस्तुत किये । ऐतिहासिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पात्रों तथा घटनाओं का चित्रण किया । इतिवृत्ति एवं घटनाप्रधान कहानियों के अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक विश्लेषण अन्तर्बाह्य जगत के संघर्षों को लेकर कहानियों की रचना की गई। वस्तुतः कथा-ह्य ने मानव-जीवन का सर्वांगीण चित्रण प्रस्तुत कर अधिकाधिक पाठकों को ी ओर आकृष्ट किया।

"द्विवेदी-युग में 'सरस्वती' में अनेक लेखकों की कहानियों को स्थान मिलने और धीरे-धीरे लेखकों एवं पाठकों का ध्यान साहित्य के अन्य रूपों की अपेक्षा नी की ओर अधिक आकृष्ट होने लगा।"[2] पाठकों की कहानी पढ़ने की ी हुई माँग की पूर्ति के लिए काशी से 'इन्दु' का प्रकाशन आरम्भ हुआ। के पश्चात् 'हिन्दी-गल्प माला' नामक शुद्ध कहानी मासिक पत्र प्रकाशित हुआ। -साहित्य को लोकप्रिय बनाने तथा कहानियों के अनेक रूपों एवं शैलियों के ास में 'गल्प-माला' का कार्य सराहनीय है। वैसे इन सभी पत्रिकाओं 'सरस्वती', दु', 'जीवन' तथा 'हिन्दी प्रदीप' आदि में कथा-साहित्य को प्रमुख स्थान प्राप्त । कहानी-विधा को लोक प्रिय बनाने में इनका योगदान महत्त्वपूर्ण रहा, जिसके रस्वरूप अनेक साहित्यकारों ने कहानी लेखन की ओर आकृष्ट होकर अपनी भाव-ओं, कल्पनाओं तथा विचारों को कहानी के माध्यम से मूर्त रूप देने तथा कला-क चित्र प्रस्तुत करने की दिशा में नवीनतम शैलीगत प्रयोग प्रस्तुत किये, जिससे हित्य की इस विधा ने अत्यन्त मित्तापर्वक बनकर लोकप्रियता प्राप्त की।

---

1. 'हिन्दी-कहानी : उद्भव और विकास'—डॉ० सुरेश सिन्हा, पृ० १०६।
2. 'हिन्दी-साहित्य और उसकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ'—डॉ० गोविन्द दास शर्मा, पृ० १००।

समयुगीन मानव-प्रवृत्ति समयाभाव के कारण विस्तारगामी मनोरंजन साधनों का परित्याग कर संक्षिप्त मनोरंजन के क्षेत्रों में पदार्पण करती जा रही थी साहित्यिक क्षेत्र में पाठकों की रुचि लम्बे-लम्बे नाटकों, महाकाव्यों और उपन्यास से हटकर छोटे नाटकों, एकांकियों, मुक्तक कविताओं तथा कहानियों की दिशा अग्रसर हुई। इस प्रवृत्ति ने कहानी-रचना को विशेष प्रश्रय प्रदान किया। मान जीवन की व्यस्तता के कारण आधुनिक युग में कहानी अत्यधिक लोकप्रिय हो चली गई। मनुष्य को अध्ययन के लिए जो भी थोड़ा-सा अवकाश मिलता है उस वह कहानियाँ पढ़ने का ही अधिक इच्छुक रहता है क्योंकि वे लघु आकार की होने कारण कम समय में पढ़ी जा सकती हैं। डॉ० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा के शब्दों "वर्तमान युग में समय का मूल्य बढ़ गया है। थोड़े-से-थोड़े समय में अधिक उपार और आमोद को महत्त्व मिल रहा है। अतएव नाटक और उपन्यास ऐसी विस्तार गामी रचनाओं को पढ़ने के लिए जितना समय अपेक्षित होता है, उतना सम सरलता से नहीं दे पाते।...आज कहानी ही अपनी लघुता के कारण सर्वप्रिय बि बन रहा है।"[1]

कहानी अधिकांश पाठकों के मनोविनोद का साधन है। इसका प्रचार इ युग में इतना व्यापक हुआ कि केवल कहानी-विधा को लेकर अनेक पत्र-पत्रिकाओं क प्रकाशन होने लगा, जिनका प्रसार स्कूलों तथा विश्वविद्यालयों के वाचनालयों, रेल स्टेशनों और फुटपाथों पर विशेष रूप से दिखाई देने लगा। यात्रा करते हुए साधा रण यात्रियों तक के हाथों में कहानी-पत्रिकाएँ दिखाई पड़ने लगीं। विद्यालयों कहानी-प्रतियोगिताएँ प्रारम्भ हुईं। साहित्य की इसी विधा को यह श्रेय प्राप्त हुआ जिसने साधारण पढ़े लिखे व्यक्तियों को भी अपनी ओर आकृष्ट कर मनोरंज प्रदान किया। फलस्वरूप निरंतर इसके पाठकों तथा लेखकों की वृद्धि होती गई औ कहानी-साहित्य की सबसे लोकप्रिय विधा बन गई।

कथा-साहित्य की ओर साहित्यकारों की दृष्टि

कहानी की लोकप्रियता के फलस्वरूप 'कौशिक' जी के समकालीन अनेक प्रसिद्ध साहित्यकारों की दृष्टि इस विधा की ओर आकृष्ट हुई। जयशंकर प्रसाद और सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' जैसे प्रसिद्ध कवि तथा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जैसे विख्यात आलोचक भी कहानी-लेखन की दिशा में अग्रसर हुए। कहानी विधा की

---

१. 'कहानी का रचना-विधान'—पृष्ठ ४।

यता का यह उत्कृष्टतम प्रमाण है। जन-जीवन में उठती हुई नित्य नवीन
ाओं ने हिन्दी-साहित्यकारों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। चन्द्रधर शर्मा
', जयशंकर प्रसाद, प्रेमचन्द, विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', सुदर्शन, जी० पी०
त्र, ज्वालादत्त शर्मा, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, चतुरसेन शास्त्री, गोविन्द
पन्त, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', भगवतीप्रसाद वाजपेयी, सूर्यकान्त त्रिपाठी
ला' आदि साहित्यकारों की दृष्टि इस विधा की ओर गई और इन्होंने जीवन
ीन मूल्यों को पहचानते हुए युग की माँग को पूर्ण करने का प्रयास किया।
तत्कालीन जीवन से समस्याएँ लेकर उनका यथार्थ चित्रण अपनी कहानियों
ुत किया और घटनाओं की प्रधानता के स्थान पर चरित्रांकन पर बल देना
किया। इनकी कहानियों के पात्र यथार्थ जीवन के जीते-जागते प्राणी और
समस्याएँ मानव जीवन की ज्वलन्त समस्याएँ हैं।

इस काल की कहानियों का वर्गीकरण किसी एक सिद्धान्त के आधार पर
कठिन है। प्रायः सभी लेखकों ने विभिन्न प्रकार की रचनाएँ की हैं और
ृथक्-पृथक् भागों में बाँटा जा सकता है। सम्भवतः इनमें ऐसा एक भी लेखक
है जिसने आद्योपांत एक ही दृष्टिकोण को सामने रखकर कहानियों की रचना
और उसकी कहानियों को निर्विवाद रूप से एक ही वर्ग में रखा जा सके।
ी सम्पूर्ण हलचल तथा सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक उथल-पुथल को
करने का सबसे सरल और सशक्त माध्यम कहानी ही था। अतः तत्कालीन
लनों और सुधारवादी प्रवृत्तियों का प्रभाव सभी कहानीकारों की रचनाओं में
धिक रूप में मिलता है।

निष्कर्षतः अधिकांश लेखकों ने व्यक्तिगत विशेषताओं के साथ कथा-साहित्य
ने युग को प्रतिबिम्बित किया और कहानी-लेखन का प्रवाह, लोकप्रियता के
 शीघ्र ही अन्य साहित्यिक विधाओं से बहुत आगे बढ़ गया तथा तत्कालीन
पत्र-पत्रिकाओं में कहानियों को प्रमुखता दी जाने लगी।

तृतीय अध्याय

'कौशिक' जी की कहानियों का वर्गीकरण तथा प्रमुख कहानियों का परिचय

'कौशिक' जी ने अपने जीवन-काल में लगभग तीन-सौ कहानियों की रचना की, जो 'मणिमाला', 'गल्पमन्दिर', 'प्रायश्चित्त', 'प्रेम-प्रतिमा', 'कल्लोल' (सन् १६४६) 'कन्था' (सन् १६५३), 'चित्रशाला' (सन् १६५८), 'पेरिस की नर्तकी' (सन् १६५८), 'साध की होली' (सन् १६५८), 'ईश्वरीय दण्ड' (सन् १६५६) 'खोटा बेटा' (सन् १६५६), 'जीत में हार' (सन् १६५६), 'प्रतिशोध' (सन् १६५६), 'रक्षा-बन्धन' (सन् १६५६), 'एप्रिल फूल' (सन् १६६०), 'विश्वम्भर नाथ शर्मा 'कौशिक' की इक्कीस कहानियाँ' (सन् १६६४), 'पथ-निर्देश' (सन् १६६१) आदि कथा-संग्रहों में संकलित हैं। समय-समय पर लिखी जानेवाली इनकी कुछ कहानियाँ समकालीन पत्र-पत्रिकाओं में भी प्रकाशित होती रहीं, जैसे 'रक्षा-बन्धन'[1], 'सुफल'[2] और 'मिलन'[3] आदि। इनकी अधिकांश कहानियों के संग्रह इनकी मृत्यु के पश्चात् ही प्रकाशित हुए हैं। कहानी-संग्रहों के अतिरिक्त इनकी विजयानन्द दुबे' के नाम से 'दुबे जी की डायरी' तथा 'दुबे जी की चिट्ठियाँ' नामक रचनाएँ भी उपलब्ध हैं, जिन्हें कथा-साहित्य के अन्तर्गत रखना ही उपयुक्त होगा। ये लेखक के गल्प-साहित्य की उत्कृष्टतम रचनाएँ हैं, जो साहित्य की किसी अन्य विधा के अन्तर्गत नहीं रखी जा सकतीं। कुछ आलोचक इन्हें हास्य लेखों के अन्तर्गत स्वीकार करते हैं, परन्तु अधिकांश आलोचकों ने इन्हें कहानी-साहित्य के ही अन्तर्गत रखा है। श्री त्रिलोचन पाण्डेय के शब्दों में "दुबे जी की चिट्ठियाँ' भी आपकी कहानियों का संग्रह है।'[4] प्रो०

मोहनलाल जिज्ञासु ने भी इन्हें कहानियों के ही अन्तर्गत स्वीकार करते हुए कहा है, "उन्होंने कुछ हास्यपूर्ण कहानियाँ भी लिखी हैं—'दुबे जी की चिट्ठी' आदि।"[1] इन पुस्तकों की रचना डायरी तथा पत्रात्मक शैली में हुई है। संभव है कुछ आलोचक इन्हें कहानी की संज्ञा न दें परन्तु इनके मूल आकार पर दृष्टि डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन पत्रों के रूप में लेखक ने समकालीन समस्याओं एवं परिस्थितियों को लेकर व्यंग्य-चित्र प्रस्तुत किये हैं। इनमें कुछ पत्रों का आकार निश्चित रूप से कहानी के अनुरूप है।

'कौशिक' जी ने अपने युग की सुधारवादी प्रवृत्ति से प्रभावित होकर समकालीन सभी परिस्थितियों तथा आन्दोलनों का चित्रण करते हुए अपनी कहानियों में आदर्शवाद की प्रतिष्ठा की तथा इसके लिए विशेषतः तत्कालीन समाज एवं राजनीति के क्षेत्र से विषय ग्रहण किये। वस्तुतः कथा के गठन में आधार उपस्थित करने वाले विषयों की दृष्टि से इनकी कहानियाँ प्रमुखतः दो वर्गों में विभाजित की जा सकती हैं :—

१. सामाजिक कहानियाँ।

२. राजनीतिक कहानियाँ।

उक्त दो प्रकार की कहानियों के अतिरिक्त 'कौशिक' जी ने ऐतिहासिक तथा मनोवैज्ञानिक विषयों को भी कुछ कहानियों का आधार बनाया परन्तु इनकी संख्या बहुत कम है, इसलिये इनके लिये एक तीसरा वर्ग 'विविध कहानियाँ' बना सकते हैं। 'कौशिक' जी ने अपने कथा-साहित्य में मुख्यतः इतिवृत्त, चरित्र-चित्रण तथा घटनाओं को ही प्रधानता दी। इस दृष्टि से इनकी कहानियाँ निम्न तीन प्रकार की हैं :—

१. इतिवृत्त प्रधान कहानियाँ।

२. चरित्र-प्रधान कहानियाँ।

३. घटना-प्रधान कहानियाँ।

वस्तु, चरित्र तथा घटना के अतिरिक्त कुछ कहानियों में कार्यव्यापार की प्रधानता है, इन्हें कार्य-प्रधान कहानियों के अन्तर्गत रखा जा सकता है, परन्तु इस प्रकार की कहानियों की संख्या बहुत कम है। इसलिए इन्हें घटना-प्रधान कहानियों के वर्ग में भी रख सकते हैं। कुछ कहानियों की रचना केवल मनोरंजन की दृष्टि से की

प्रारम्भावस्था थी, इसलिए इनकी दृष्टि उस व्यापक क्षेत्र पर न जा सकी जिसमें आगामी कहानीकारों ने प्रवेश किया। मुन्शी प्रेमचन्द की कहानियों में 'कौशिक' जी की अपेक्षा विषयगत विस्तार बहुत अधिक है। फिर भी 'कौशिक' जी ने जिस विषय पर लेखनी उठाई, उसमें पूर्ण सफलता प्राप्त की।

'कौशिक' जी का युग सुधारवादी प्रवृत्ति से आच्छादित था। देश में समाज-सुधार-सम्बन्धी आन्दोलन बड़े वेग से चल रहे थे। एक ओर बंगाल में ब्रह्मसमाज का आन्दोलन भारतीय जन-जीवन में क्रान्ति का सन्देश प्रसारित कर रहा था, तो दूसरी ओर उत्तर-भारत में आर्य-समाज ने भारतीय समाज के समक्ष जीवन के नवीन मूल्यों का उद्घाटन किया था। देश के कोने-कोने में समाज-सुधार की लहर दौड़ रही थी और बुद्धिजीवी वर्ग उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता था। राजनीति के क्षेत्र में भी स्वराज्य-आन्दोलन संचालित हो चुका था, जिसका प्रभाव भारतीय वायुमण्डल में व्याप्त था। इसी वातावरण में 'कौशिक' जी कथा-साहित्य-रचना के क्षेत्र में अग्रसर हुए। समकालीन समाज से यथार्थ विषय तथा पात्र, व्यक्तिगत, पारिवारिक और जाति, सम्प्रदाय तथा धर्म-सम्बन्धी अनेक प्रकार की समस्याओं का चयन कर लेखक ने उनका सर्वाङ्गीण चित्र उपस्थित करते हुए समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया।

'कौशिक' जी की अधिकांश कहानियाँ सामाजिक वर्ग के ही अन्तर्गत आती हैं[1] जिनमें समाज तथा परिवार के विभिन्न स्वरूपों पर प्रकाश डाला गया है। पारिवारिक जीवन का 'कौशिक' जी को विशेष ज्ञान था।। इन्होंने परिवार के भीतर झाँक कर देखा और उसकी समस्याओं का चित्रण अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया। 'माता का हृदय' तथा 'खोटा बेटा' कहानियों में माता-पुत्र और पिता-पुत्र के व्यावहारिक प्रेम-सम्बन्धों पर दृष्टि डाली गई है। 'मातृभक्ति'[2] कहानी समाज में सास-बहू के वैमनस्य की प्रचलित ज्वलन्त समस्या पर आधारित है। प्रमुख पात्र शिवनारायण की माँ बहू के साथ सदैव दुर्व्यवहार करती थी और बहू के माता-पित तथा भाई-बहनों के लिए अपशब्दों का प्रयोग करती थी। शिवनारायण ऐसे चरि का प्रतीक है जो बिना सोचे समझे मातृभक्ति का ढोंग रचता है और सास-बहू समझौता कराने का प्रयत्न नहीं करता। एक दिन इसी प्रकार बहू के सास क पानी देने से इंकार करने पर दोनों में कलह होती है और सास बहू के कपड़ों

१. "इनकी कहानियाँ अधिकतर सामाजिक हैं।" —'काव्य के रूप'—गुलाबराय, पृष्ठ १०७।
२. 'मणिमाला' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ ११६-१२४।

आग लगा देती है। वह अपनी रक्षा के लिये सास को पकड़ लेती है, जिससे दोनों जलकर मर जाती हैं। इस भयंकर दुष्परिणाम पर लेखक ने दृष्टि डाली है। 'वह प्रतिमा', 'पतिव्रता', 'प्रेम का पापी', तथा 'मालती का प्रेम' आदि कहानियों में पति-पत्नी तथा स्त्री-पुरुष के प्रेम-सम्बन्धों पर प्रकाश डाला है।

भारतीय समाज में त्यौहारों को विशेष महत्व दिया जाता है तथा बहुत धूमधाम के साथ मनाया जाता है। 'कौशिक' जी ने 'विजयदशमी', 'वाह री होली', 'शुक्ल जी की होली', 'होली', 'दीवाली', 'मुन्शी जी की दीवाली', 'बड़ा दिन', 'एप्रिल फूल', 'रक्षाबन्धन' आदि पर्वों से सम्बन्धित कहानियों की रचना की, जिनमें विभिन्न पर्वों, होली, दिवाली, विजयदशमी तथा रक्षाबन्धन पर होने वाले सामाजिक रीतिरिवाजों और कार्यों का चित्रण किया। होली के त्यौहार पर वृद्ध पुरुषों में भी होली खेलने की आकांक्षा तथा उत्साह रहता है और बच्चे तथा नवयुवक किस प्रकार उनके साथ होली खेलते हैं इस सामाजिक तथ्य को 'कौशिक' जी ने पकड़ा और अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया। पहली अप्रैल के दिन किस प्रकार व्यक्ति अपने मित्रों तथा सम्बन्धियों को मूर्ख बनाते हैं, इसका चित्रण 'एप्रिल फूल'[1] कहानी में मिलता है, जिसमें प० श्यामनाथ की पत्नी अपने पति के उन मित्रों को बड़ी चालाकी से मूर्ख बना देती है जो नित्य ही उसके पति को नीचा दिखाने के प्रयत्न में लगे रहते थे तथा पहली अप्रैल के दिन पं० श्यामनाथ की पत्नी के दर्शनों के लिए उनके घर आये।

'बुद्धिबल', 'धर्म का धक्का', 'राजा निरंजन' तथा 'ढपोर शंख' आदि कहानियों में 'कौशिक' जी ने धार्मिक क्षेत्र के खोखलेपन को स्पष्ट किया है। 'भक्त'[1] कहानी में यह आदर्श उपस्थित किया गया है कि सच्चा भक्त पूजा या कृत्रिम आडम्बर करने वाला व्यक्ति नहीं वरन् रोगियों तथा निर्धनों की सहायता करने वाला व्यक्ति ही सच्चा भक्त है। समाज में ऐसे व्यक्तियों का अभाव नहीं जो अपने यश के लिये साधु-सन्यासियों को नित्य दान करते रहते हैं, कीर्तन करवाते हैं तथा अनेक प्रकार के धार्मिक आडम्बर करते रहते हैं परन्तु किसानों तथा निर्धन व्यक्तियों पर नाना-प्रकार के अत्याचार करके अपना आतंक जमाये रहते हैं। 'भक्त' कहानी के प्रमुख पात्र ठाकुर किशनसिंह इसी प्रकार के ढोंगी भक्त हैं।

भाग्यवाद पर 'कौशिक' जी का दृढ़ विश्वास था। अपनी इस मान्यता का चित्रण भी उन्होंने कुछ कहानियों-'भाग्य-चक्र' तथा 'नियति' आदि में किया है। 'भाग्य-चक्र'[1] कहानी इस तथ्य का स्पष्टीकरण करती है कि मनुष्य का भाग्य प्रति क्षण चक्र की भाँति परिवर्तित होता रहता है और व्यक्ति को कहाँ-से-कहाँ ले जाता है। भारतीय समाज में अधिकांश जनता इसी धारणा में विश्वास रखती है।

भारतीय समाज के निर्धन किसानों तथा श्रमिकों आदि के जीवन की समस्याओं का चित्रण 'कौशिक' जी की 'अपयश', 'बेदखली' 'आर्त', 'गरीब हृदय', 'उद्धार', 'अशिक्षित का हृदय', 'दरिद्रता का पुरस्कार', 'पूजा का रुपया' तथा 'मोह' आदि कहानियों में किया है। ग्रामीण जीवन में किसान चाहे कितने भी अशिक्षित हों परन्तु हृदय उनका भी भावुकता से ओत-प्रोत रहता है। वे अपनी जमीन तथा वृक्षों इत्यादि से एक प्रकार की साहचर्यजनित भावनाएँ जोड़ लेते हैं फिर उनकी रक्षा के लिये अपने प्राण तक देने को तैयार हो जाते हैं। इस तथ्य का निरूपण 'अशिक्षित का हृदय'[2] कहानी में किया गया है। वृद्ध मनोहरसिंह ठाकुर शिवपालसिंह के द्वारा अपना नीम का पेड़ कटवाने के लिये किसी शर्त पर भी तैयार नहीं होता। उस वृक्ष पर ठाकुर का अधिकार हो जाये इस बात को तो वह स्वीकार कर लेता है परन्तु वृक्ष को कटवाने के विचार पर अपनी जान पर खेलने के लिये कटिबद्ध हो जाता है। 'दरिद्रता का पुरस्कार'[3] कहानी समाज की निर्धनता की समस्या को लेकर लिखी गई है। निर्धन व्यक्ति किस प्रकार अपने जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये 'चोरी' आदि बुरे कार्यों की ओर कदम बढ़ाते हैं तथा पकड़े जाने पर पुलिस की मार तथा समाज का धिक्कार सहते हुए आत्मग्लानि वश मृत्यु की गोद में आश्रय लेते हैं—'मोहन' का जीवन इसी तथ्य को स्पष्ट करता है। वह व्यक्ति निर्धनता के कारण विवश होकर एक दुकान से धोती चुराने पर पकड़ा जाता है तथा पुलिस की मार खाता है और अन्त में समाज से तिरस्कृत होकर दरिद्रता के पुरस्कार, मृत्यु को प्राप्त करता है।

समाज के निम्न तथा मध्य-वर्ग के अतिरिक्त 'कौशिक' जी ने कुछ कहानियों 'राजा और प्रजा', 'राज-पथ', 'राजा निरंजन', 'गुण ग्राहकता', 'महाराज पैलेस',

---

समाज-सुधारक ढोंगी नेताओं की चालबाजियों का चित्रण करते हुए अपने युग की राजनीतिक उथल-पुथल की झाँकी प्रस्तुत की है और पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डाला है। प्रथम तीन कहानियाँ फ्रांस तथा जर्मन के युद्ध-सम्बन्धी राजनीतिक विषय पर आधारित हैं। उनके युग में स्वराज्य-प्राप्ति के उद्देश्य से राष्ट्रीय आन्दोलन सक्रिय था। मुस्लिम लीग, होमरूल लीग और स्वराज्य-पार्टी आदि की स्थापना हुई तथा गांधी जी के नेतृत्व में असहयोग आंदोलन का श्रीगणेश हुआ। इन सभी विषयों पर 'कौशिक' जी ने अपनी 'दुबे जी की डायरी' तथा 'दुबे जी की चिट्ठियाँ' में सुन्दर प्रकाश डाला है। 'अहिंसा' तथा 'स्वयं-सेवक' आदि कहानियों में तत्कालीन जीवन से पात्र ग्रहण करके उनका चरित्र-चित्रण किया है। इनके अतिरिक्त कुछ कहानियों में राजनीतिक वातावरण का चित्रण करना लेखक को अभीष्ट रहा है जैसे 'राशन-कार्ड', 'वीर-परीक्षा', 'कम्युनिस्ट-सभा', 'देश-भक्ति' आदि कहानियों में राजनीतिक युद्धों, सभाओं तथा राशन आदि की व्यवस्थाओं का चित्रण प्रस्तुत किया गया है। सामाजिक कहानियों की अपेक्षा इस वर्ग की कहानियों की संख्या बहुत कम होने पर भी इनमें तत्कालीन राजनीतिक जीवन की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है तथा पात्रों के चरित्र की महत्त्वपूर्ण विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है अतः इन्हें एक भिन्न वर्ग में रखना उचित ही है।

विविध कहानियाँ

उक्त दो विषयों के अतिरिक्त कुछ कहानियों में कौशिक जी ने ऐतिहासिक तथा मनोवैज्ञानिक विषयों का भी आश्रय लिया है, परन्तु उनमें लेखक का उद्देश्य प्रमुख रूप से इतिहास और मनोविज्ञान के तथ्यों का स्पष्टीकरण न होकर प्रेम के विभिन्न रूपों को प्रस्तुत करते हुए घटनाओं का चित्रण करना रहा है। 'आजादी' शीर्षक कहानी एक ऐतिहासिक पात्र, मुसलमान बादशाह शाहजहाँ के पुत्र दाराशिकोह के जीवन की एक घटना के आधार पर लिखी गई है। दाराशिकोह वेश्या हसीना की पुत्री दोस्नी पर मुग्ध होकर उसे बुलवाने के लिए मुकबिल को भेजता है, परन्तु दोस्नी अपनी आजादी नष्ट होने के भय से वहाँ आने से इन्कार कर देती है। उसका विचार था कि दारा की खिदमत में आने पर वह माँ से स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं मिल सकेगी। दारा जबरदस्ती उसे मँगाता है परन्तु फिर आजादी की माँग करने पर वापस भेजने का आदेश दे देता है। तत्पश्चात् दोस्नी के दारा से माँगने पर मांग करने पर दारा उत्तर देता है, "अगर बादशाह रियाया की आजादी के हक के लिये गुलाम बन जायें कि अपने रुतबे को भूलकर मामूली इन्सानों के घर आने-जाने लगें तो उनमें और मामूली इन्सान में

में पर्वं ही बना रहा।"[1] अतः वह कौशी के तर्क से पुत्री को विदग्ध कर देता है और वह मल्लिका होती है। चौरंगबेव के दास की बदल करवाने पर अधिक लोक सताने वालों में मलीका सदा रोती ही थी। इस प्रकार से यह कहानी ऐतिहासिक पात्र के जीवन की एक घटना पर आधारित है, किसी विशेष ऐतिहासिक तथ्य का उद्घाटन नहीं करती। अतः इसे या तो सामाजिक कहानियों के वर्ग में रखा जा सकता है या अन्य से एक ऐतिहासिक कहानी के रूप में भी स्वीकार किया जा सकता है।

'कौशिक' जी ने विशेष रूप से मनोवैज्ञानिक कहानियों की रचना नहीं की परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि उनके कथा-साहित्य में मनोवैज्ञानिक चित्रण का नितांत अभाव है। पात्रों के चरित्र-चित्रण में लेखक ने मनोविज्ञान को विशेष रूप से मुखरित किया है। इसका मनोवैज्ञानिक चित्रण अधिकांश व्यंजित न होकर चलित रूप में सामने आता है। 'वह प्रतिमा' कहानी का आद्योपान्त आधार मनोविज्ञान ही रहा है। कहानी का आरम्भ ही प्रमुख पात्र के मानसिक व्यापार तथा उथल-पुथल के विश्लेषण से हुआ है।[2] इसी प्रकार से 'ताई' तथा कुछ अन्य कहानियों में भी 'कौशिक' जी ने पात्रों का मानसिक विश्लेषण बड़े मनोवैज्ञानिक ढंग से किया है। मनोवैज्ञानिक कहानी के विषय में 'कौशिक' जी ने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये हैं :—

"मनोवैज्ञानिक कहानी वही है कि कहानी के पात्र जो कुछ सोचें वह सब भार कलम डालकर बाहर निकाल दें। प्रत्येक पात्र पर ऐसा जबरदस्त पहरा लगा दें कि वह कोई ऐसी बात सोच ही न सके जिसका पता आपके कलम को न चल जाय या फिर जैसा आप चाहें वैसा ही सोचें-समझें। बस यह समझ लीजिए कि प्रत्येक पात्र का दिमाग आपकी मुट्ठी में हो, जब जिस ओर चाहें उसे घुमा दें।"[3] इसी आधार पर इन्होंने मनोवैज्ञानिक चित्रण प्रस्तुत किये हैं। 'वह प्रतिमा' कहानी

---

१. 'प्रतिशोध' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० २१६-२१७।

२. "स्मृति—वह मर्म-स्पर्शी स्मृति जो हृदय पृष्ठ पर करुणोत्पादक भावों की उस पक्की और गहरी स्याही से अंकित की गई है, जिसका मिटना इस जन्म में कठिन ही नहीं, प्रत्युत असंभव है। आह ! वह स्मृति कष्टदायिनी होने पर भी कितनी मधुर और प्रिय है। उस स्मृति से हृदय जला जाता है, तन-मन राख हुआ जाता है, फिर भी उसे कलेजे से दूर करने को जी नहीं चाहता।"—'चित्रशाला' [कहानी संग्रह] पृष्ठ ११५।

को सामाजिक कहानियों के क्षेत्र में भी रख सकते हैं तथा अलग से मनोवैज्ञानिक कहानी भी स्वीकार कर सकते हैं।

प्राञ्चलिक कहानियाँ लिखने की प्रवृत्ति हिन्दी-साहित्य में उस समय विकसित नहीं हुई थी। इसलिए 'कौशिक' जी की किसी कहानी को हम आञ्चलिक नहीं कह सकते। इनकी अधिकांश कहानियाँ शहरी जीवन से सम्बन्धित हैं, ग्रामीण जीवन को लेकर लिखी गई कहानियों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि 'कौशिक' जी की ग्रामीण जीवन में अधिक पैठ नहीं थी। इनकी कहानियाँ प्रमुखतः मध्यम वर्ग से सम्बन्धित हैं। उच्च वर्ग में राजाओं, जमींदारों, नवाबों आदि के जीवन को लेकर भी कुछ कहानियाँ लिखी हैं, जैसे -'गुण-ग्राहकता', 'राजा निरंजन', 'विजय', 'डोला', 'तमाचा', 'महाराजा-पैलेस', 'न्याय', 'भक्त' इत्यादि। इनमें व्यंग्य की प्रधानता रही है।

इतिवृत्तप्रधान कहानियाँ

'कौशिक' जी की अधिकांश कहानियाँ इतिवृत्त प्रधान हैं, जिनमें घटनाओं का जोड़-तोड़ कुशलतापूर्वक किया गया है। जिस प्रकार मुंशी प्रेमचन्द ने अपने कथा-साहित्य में चरित्र-चित्रण को, प्रसाद ने प्रेम, सौन्दर्य तथा वातावरण तत्व को अपनी कहानियों का मूल विषय बनाया, उसी प्रकार 'कौशिक' जी ने कथा-तत्त्व को अपनी कहानियों में प्रधानता दी। इन्होंने सर्वप्रथम रोमांटिक कहानियों की दिशा बदल कर उन्हें सामाजिक रूप प्रदान किया और कथा-प्रधान बनाया। डॉ० श्रीकृष्ण-लाल के शब्दों में—"कौशिक इस प्रकार के कहानी-लेखकों में सर्वश्रेष्ठ है।"[1] 'तोता-बेटा', 'मुंशी जी का ब्याह', 'मुन्शी जी की दीवाली', 'महाराजा-पैलेस', 'विजय-दशमी', 'शुक्ल जी की होली', 'पवित्र फूल', 'सच्चा कवि', 'खिचायन काका' तथा 'दाँत का दर्द' इत्यादि इसी प्रकार की कहानियाँ हैं जिनमें कहानीकार ने मनोरंजक कथा-प्रसंगों द्वारा सुन्दर कहानियाँ कही हैं। इनमें चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, वातावरण आदि तत्त्वों की अपेक्षा कथावस्तु को सजाने-संवारने तथा कुतूहलवर्धक ढंग से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने की कला में लेखक को अधिक सफलता प्राप्त हुई है। गृहस्थ-जीवन के आदर्श और यथार्थ के मनोवैज्ञानिक अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण इतिवृत्तात्मक रूप में कहते हुए 'कौशिक' जी ने [illegible]

स्थितियों में उत्पन्न होने वाली मानव-मन की उलझनों पर विशेष बल दिया है।

कहानी-लेखन मे कथा-तत्व को विशेष स्थान देने पर भी 'कौशिक' जी ने नियमगत अन्य तत्वों की अवहेलना नहीं की है। इनकी बहुत-सी कहानियों में चरित्र-चित्रण, वातावरण, कार्य और प्रभावात्मकता का कलात्मक विकास हुआ है। कहानीकार का ध्यान कथा के विकास में घटनाओं के तारतम्य की ओर विशेष रूप से रहा है साथ ही कथा की प्रभावात्मकता को कहीं नष्ट नहीं होने दिया। कथा के अनुरूप वातावरण प्रस्तुत करने में 'कौशिक' जी को विशेष सफलता प्राप्त हुई है।

चरित्र-चित्रण-प्रधान कहानियाँ

इस वर्ग के अन्तर्गत 'कौशिक' जी की ताई', 'इक्के वाला', 'स्वाभिमानी नमक हलाल', 'प्रेम का पापी', 'पेरिस की नर्तकी', 'साथ की होली', 'विधवा' तथा 'लौंडरी का पेशा' आदि कहानियाँ रखी जा सकती हैं। इनमे कहानीकार की दृष्टि मानव-चरित्र के निगूढ रहस्यों के उद्‌घाटन पर प्रमुख रूप से रही है। सामाजिक, पारिवारिक तथा राजनीतिक जीवन के निम्न, मध्यम तथा उच्च सभी वर्गों के पात्रो की चरित्रगत विशेषताओं पर प्रकाश डालना लेखक का उद्देश्य रहा है। इस क्षेत्र मे 'कौशिक' जी की विशेषता यह रही है कि उन्होने यत्र-तत्र पात्रो के चरित्रों मे आकस्मिक परिवर्तन कर डाला है। इस प्रणाली को कुछ आलोचक अस्वाभाविक अथवा असन्तुलित भावना का उद्रेक भी कह सकते हैं, परन्तु वास्तविकता यह है कि इसके मूल में सर्वदा ही लेखक की आदर्शवादी मनोवृत्ति प्रधान रही है। इसी सुधारवादी दृष्टिकोण ने आकस्मिक चरित्र-परिवर्तन को प्रश्रय प्रदान किया है। 'ताई' शीर्षक कहानी में प्रमुख पात्र रामेश्वरी की आन्तरिक तथा बाह्य मनस्थितियों का चित्रण करते हुए अन्त में उसे आदर्श चरित्र के रूप मे प्रस्तुत करने के उद्देश्य से ही बालक मनोहर के छज्जे से गिरने की घटना का समावेश करके उसके चरित्र में अचानक परिवर्तन ला दिया है। इसी प्रकार 'स्वाभिमानी नमक हलाल', 'सच्चा कवि', 'पथ-निर्देश', 'माता का हृदय' तथा नास्तिक प्रोफेसर' इत्यादि कहानियो के प्रमुख पात्रों 'सेठ खुशहाल', 'प्रवीण जी', 'विश्वेश्वरनाथ', 'व्रजमोहन' और उसकी 'माँ' तथा 'प्रोफेसर कुंजबिहारी' आदि को विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत करने के लिए उनके चरित्र में आदर्श गुणों की स्थापना के उद्देश्य से आकस्मिक परिवर्तन उपस्थित कर दिया गया है। ये चरित्र जीवन में एक बार किस घटना से ठोकर खाकर अपना व्यवहार परिवर्तित कर लेते हैं, यह लेखक सुधारवादी प्रवृत्ति का ही परिणाम है। आदर्श चरित्रों की अवतारणा ... 'कौशिक' जी ने अपनी चरित्र-प्रधान कहानियों की रचना की है। इस ...

आकस्मिक परिवर्तन इनकी सभी चरित्र-प्रधान कहानियों में नहीं मिलता। 'लीडरी का पेशा' कहानी इस गुण अथवा दोष से सर्वथा मुक्त है। इसके प्रमुख पात्र 'पंडित उमादत्त शुक्ल' नेतागिरी को पेशा समझकर अपनाते हैं और सदैव पिता की आज्ञा को उपेक्षापूर्वक अवहेलना करते हैं। अन्त मे पिता की मृत्यु की सूचना प्राप्त करने पर भी उनको अन्त्येष्टि-क्रिया में भाग लेने नहीं जाते। कई मास पश्चात् घर जाने तथा माता के खरी-खोटी सुनाने पर भी उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। माता अपने छोटे भाई के पास जाकर रहने लगीं तथा शुक्ल जी आराम से "पत्नी-सहित वहीं रहकर देशोद्धार के लिए नित्य नई युक्तियाँ सोचने लगे।"[1] उनके चरित्र मे किसी प्रकार परिवर्तन नहीं किया गया, कारण इसमें लेखक का उद्देश्य तत्कालीन नेताओं के यथार्थ चरित्र को उपस्थित करना रहा है।

घटना-प्रधान कहानियाँ

'कौशिक' जी की प्रमुख प्रवृत्ति वर्णनात्मक शैली के अन्तर्गत घटना-प्रधान कहानियाँ लिखने की ओर अधिक रही है। 'रेल यात्रा', 'रक्षा-बन्धन', 'होली', 'जीत में हार', 'एप्रिल फूल', 'न्याय', 'राजपथ', 'अशिक्षित का हृदय', 'दाँत का दर्द', 'मुंशी जी की दिवाली', 'पूजा का रुपया', 'विजय', 'जलन' अथवा आदि कहानियाँ इसी वर्ग के अन्तर्गत आती है। इनमें लेखक ने यथास्थान संयोग-तत्व तथा दैवी घटनाओं के चमत्कार का आश्रय लिया है। प्रत्येक कहानी में अनेक घटनाओं का अव्यवस्थित रूप मे समावेश न करके 'कौशिक' जी ने कम घटनाओं का ही सुव्यवस्थित ढंग से चित्रण किया है। मनोरंजन, करुणा, आह्लाद, आश्चर्य तथा जिज्ञासा उत्पन्न करने वाली इनकी कहानियों की घटनाएँ पाठकों के हृदय पर अपना प्रभाव छोड़े बिना नहीं रहतीं। 'कौशिक' जी ने घटनाओं का चयन विशेषतः सामाजिक-पारिवारिक जीवन में होने वाले रीतिरिवाजों, धार्मिक कृत्यों तथा सामाजिक व्यावहारिक कृत्यों के दृश्यों से किया है और तत्कालीन जीवन का यथार्थ चित्र उपस्थित किया है। डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय जी के शब्दों में—"कौशिक जी ने अधिकतर घटना-प्रधान कहानियाँ लिखी हैं और वे घटनाएँ दैनिक, सामाजिक या पारिवारिक जीवन से लेते हैं।"[2] वस्तुतः ये घटनाप्रधान कहानियाँ लेखक के तत्कालीन साधारण जन-जीवन से अत्यधिक सम्पर्क होने की भावना को व्यक्त करती हैं।

वातावरण, प्रभाव तथा कार्य-प्रधान कहानियों की रचना में लेखक की अधिक प्रवृत्ति दिखाई नहीं पड़ती। 'सबूत' शीर्षक कहानी को 'कार्य प्रधान' कहानियों की श्रेणी में भी रख सकते हैं तथा घटना-प्रधान कहानियों के अन्तर्गत भी स्वीकार कर सकते हैं। इसमें एक खुफिया पुलिस-इन्सपेक्टर स्त्री-वेश धारण कर एक गिरहकट को सबूत सहित गिरफ्तार करता है। कहानी प्रारम्भ से अन्त तक कौतूहल-वृत्ति को जागृत करती है तथा अन्त में कार्य की समाप्ति पर जिज्ञासा की तृप्ति हो जाती है। कार्य-प्रधान कहानियों में किसी रहस्यमय अलौकिक चमत्कारपूर्ण कार्य का उल्लेख रहता है। इस प्रकार की कहानियाँ 'कौशिक' जी ने अधिक नहीं लिखी। 'सबूत' कहानी का कार्य भी अलौकिक न होकर लौकिक विषय पर ही आधारित है परन्तु है जिज्ञासापूर्ण, अतः इसे घटना-प्रधान और कार्य-प्रधान दोनों ही वर्गों में रखना उपयुक्त है।

हास्य-प्रधान कहानियाँ

'एप्रिल फूल', 'मुन्शी जी की दीवाली', 'मकान खाली है', 'प्रेत', 'पुराना सितार', स्टरप पम्प', 'भूत लीला', 'पहाड़', 'चौबे से दुबे', 'दाँत का दर्द', 'शुक्ल जी की होली', *'ताश का खेल'*, *'हार जीत'*, *'जागरण'*, *'उड़नछू'*, *'रेल-यात्रा'*, *'गणेश-*वाहन', 'होली', 'लनतरानी', आदि कहानियों में 'कौशिक' जी का प्रधान उद्देश्य हास्यपूर्ण विषयों की योजना द्वारा पाठकों का मनोरंजन करना रहा है। इन कहानियों के कथानक संक्षिप्त हैं तथा पात्रों का चरित्र-चित्रण स्वाभाविक, सजीव एवं परिस्थिति के अनुकूल हुआ है। पात्रों की संख्या कम है परन्तु उनके द्वारा पाठकों के हँसने-हँसाने की पर्याप्त सामग्री उपस्थित की गई है। डॉ० ब्रह्मदत्त शर्मा के अनुसार "इनकी हास्य-प्रधान कहानियों में शिष्ट तथा मर्यादित हास्य का रूप सामने आता है। इनमें रचना कला का वही रूप है जो इनकी अन्य कहानियों में मिलता है।"[१]

'ढपोर शंख', 'सिलावन काका' तथा मुन्शी जी का ब्याह' आदि कहानियों में कहानीकार ने ढोंगी पंडित, अधिक उम्र में विवाह की आकांक्षा रखने वाले तथा अन्य व्यक्तियों के जीवन पर प्रकाश डालते हुये व्यंग्य-चित्र प्रस्तुत किये हैं। इन कहानियों का विषय हास्य के साथ-साथ समाज की गली-सड़ी मान्यताओं, अन्ध-विश्वासों तथा रूढ़ियों पर व्यंग्य करना भी रहा है अतः ये कहानियाँ हास्य-व्यंग्य-प्रधान कही जा सकती हैं।

---

१ 'हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन'—पृष्ठ २१७।

वर्णनात्मक तथा विवरणात्मक कहानियाँ

'कौशिक' जी ने अपनी कुछ कहानियों की रचना मुख्य रूप से वर्णनात्मक तथा विवरणात्मक शैली से की है। 'ताई', 'विधवा', 'माघ की होली', 'मेंढ़', 'भाजाडी', 'सुधार', 'न्याय', 'पथ-निर्देश', 'विजय', 'प्रायश्चित्त', 'दरिद्रता का पुरस्कार', आदि कहानियाँ इसी वर्ग के अन्तर्गत आती हैं जिनमें कहानीकार ने इतिहासकार की भाँति तृतीय वचन का प्रयोग करते हुए सुन्दर कहानियों की रचना की है। कहानी-कला की दृष्टि से इस प्रकार की कहानियाँ निम्न कोटि की मानी जाती हैं। कुछ कहानियों की रचना 'कौशिक' जी ने प्राचीन राजा-रानी की कहानियों की परम्परा के अनुसार ही प्रारम्भ में पात्रों का परिचय देकर की है। कला की दृष्टि से भले ही ये कहानियाँ श्रेष्ठ न हों परन्तु विषय की दृष्टि से 'कौशिक' जी ने रोचक प्रसंगों की योजना तथा समाज के यथार्थ स्वरूप का उद्घाटन करते हु कहानियों में प्राण डाल दिए हैं। इस प्रकार की कहानियों में पात्रों की चारित्रि विशेषताओं को लेखक ने स्वयं वर्णन करते हुए स्पष्ट किया है तथा उद्देश्य प्रतिपादन के लिए भी स्वयं ही कहानियों के अन्त में या मध्य में जहाँ भी उपयुक्त समझा है आदर्शमयी उक्तियों को रख दिया है, जैसे 'सुधार' कहानी में 'कौशिक' जी का लक्ष्य इस तथ्य का निर्देश करना रहा है कि बुरे व्यक्ति का सुधार कब और कैसे हो सकता है। इस कहानी में कही गई लेखक की निम्न उक्ति इसी ओर संकेत करती है—

"जब तक मनुष्य की आँखों का पानी नहीं ढलता, तब तक वह सरलता-पूर्वक सुधर सकता है, परन्तु आँखों का पानी ढल जाने से उसका सुधार बड़ा कठिन हो जाता है।"[1]

निष्कर्षत: इस वर्ग की कहानियों की रचना व्यंजित रूप में न होकर विशेषतः वर्णित रूप में हुई है तथा विभिन्न प्रकार के विषयों का प्रतिपादन करते हुए लेखक ने उच्च आदर्शों की स्थापना की है।

आत्मचरितात्मक कहानियाँ

इस वर्ग के अन्तर्गत 'कौशिक' जी की 'वह प्रतिमा' तथा 'इक्केवाला' कहानियों को रखा जा सकता है, जिनमें कहानीकार ने प्रथम पुरुष की आत्मचरितात्मक शैली को अपनाया है। इन कहानियों के प्रमुख पात्र अपने जीवन की सम्पूर्ण घटनाओं

१. 'पथ-निर्देश' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ—७०।

का स्वयं ही उद्घाटन करते चलते हैं तथा पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं, वातावरण और उद्देश्य आदि का ज्ञान उन्हीं की उक्तियों के द्वारा होता है। भाषा, भाव तथा चरित्र-चित्रण की दृष्टि से ये कहानियाँ उच्चकोटि की है और इनकी रचना में 'कौशिक' जी को अद्भुत सफलता प्राप्त हुई है। वह 'प्रतिमा'[1] कहानी एक ऐसे व्यक्ति के चरित्र को लेकर लिखी गई है जो जीवन भर अपनी पत्नी के प्रेम की उपेक्षा करता रहा और उसकी मृत्यु के समय उसके प्रेम के मूल्य को पहचान पाया। पत्नी की मृत्यु के बाद वह उसकी स्मृति को क्षण भर के लिये भी नहीं भुला पाता। प्रमुख पात्र अपने सम्पूर्ण जीवन की घटनाओं का वर्णन अपनी पत्नी की याद आने पर स्वयं अपने मुँह से प्रायश्चित के रूप मे करता है। इसी प्रकार 'इक्केवाला'[2] कहानी का प्रमुख पात्र श्यामलाल अपने को बेईमान बताए जाने पर अपने जीवन की समस्त घटनाओं का वर्णन स्वयं अपने मुँह से करता है तथा यह प्रमाणित कर देता है कि वह ईमानदार व्यक्ति है। ये दोनों कहानियाँ 'कौशिक' जी के कथा-साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं।

नाटकीय शैली में रचित कहानियाँ

'चलते-फिरते' तथा 'मकान खाली है' कहानियों की रचना नाटकीय संवादात्मक शैली में की गई है। इन कहानियों में कथोपकथन तत्व की प्रधानता है, मूल-विषयों का स्पष्टीकरण पात्रों के वार्तालाप में ही स्पष्ट होता है और उसी के आधार पर कथाएँ अग्रसर होती हैं। पात्रों की चरित्रगत विशेषताओं का ज्ञान उनके वार्तालाप के द्वारा ही होता है तथा उसी के द्वारा कहानियों में उद्देश्यों का प्रतिपादन किया गया है। 'कौशिक' जी की प्रायः सभी कहानियों मे नाटकीय शैली का सुन्दर प्रयोग हुआ है परन्तु उक्त दो कहानियों मे पूर्णतया इसी शैली का प्रयोग किया गया है अतः इस वर्ग की कहानियों में ये अपना प्रमुख स्थान रखती हैं।

मिश्रित शैली में रचित कहानियाँ

'कौशिक' जी ने अपने कथा साहित्य में मुख्यतः मिश्र शैली का प्रयोग किया है जिसमें वर्णनात्मक, नाटकीय, भावात्मक तथा प्रवाहमयी शैलियों का सम्मिश्रण है इसलिये इनकी अधिकांश कहानियाँ—'मालती का प्रेम', 'त्याग', 'बन्ध्या', 'होली',

---

१. 'चित्रशाला' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ—११५-११७।
२. 'खोटा बेटा' [कहानी-संग्रह], विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ—१६१-१८२।

'सद्भाव' 'अन्तिम भेंट', 'रक्षा-बन्धन', साध की होली', 'ऐप्रिल फूल', 'पाकिस्तान', 'अशिक्षित का हृदय', 'युग-धर्म', 'पेरिस की नर्तकी', 'स्वतन्त्रता', 'जागरण', 'दाँत का दर्द', 'अबला' 'पूजा का रुपया', 'सपूत', 'माता का हृदय', 'डोला', 'सेवासिंह', 'कम्यूनिस्ट सभा', 'मुन्शी जी का ब्याह', 'बेदखली', 'भ्रम', 'समर्पण', 'माता की सीख', 'पत्रकार' तथा 'सच्चा कवि' आदि इसी वर्ग के अन्तर्गत आती है। इनमें लेखक ने प्रसंगानुकूल पात्रों के चरित्र-चित्रण, वातावरण के चित्रण तथा व्यक्तिगत विचारों एवं भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिये यथास्थान कई प्रकार की शैलियों का प्रयोग करके कहानियों में रोचकता लाने का प्रयास किया है अतः इन्हें मिश्र शैली में रचित कहानियाँ कहा जा सकता है।

'कौशिक' जी की कुछ प्रमुख कहानियों का परिचय

'कौशिक' जी के कथा-साहित्य का वर्गीकरण करते हुए विभिन्न वर्गों के अन्तर्गत आने वाली कहानियों की विशेषताओं का उल्लेख करने के पश्चात् उनकी कुछ प्रमुख कहानियों का परिचय देना उपयुक्त होगा जो उक्त सभी वर्गों में से किसी न किसी का प्रतिनिधित्व करती हों। इस प्रकार से प्रमुख कहानियों का चयन करना एक कठिन समस्या है। प्रत्येक लेखक की कुछ रचनाएँ ऐसी होती हैं जो पाठकों को विशेष रूप से प्रभावित करती हैं इसलिए उन्हें लेखक की प्रमुख रचनाएँ स्वीकार कर लिया जाता है। विभिन्न आलोचकों ने 'कौशिक' जी के कथा-साहित्य पर प्रकाश डालते हुए जिन कहानियों का विशेष रूप से उल्लेख किया है वे ये हैं—'रक्षा बंधन', 'ताई', 'वह प्रतिमा', 'उद्धार', 'विधवा', 'स्वाभिमानी नमक हलाल', 'नौकरी का पेशा', 'पेरिस की नर्तकी', 'माता का हृदय', 'मोह', 'नास्तिक प्रोफेसर', 'अशिक्षित का हृदय', 'साध की होली', 'कबीर दास', 'गंवार', 'एप्रिल फूल', 'रव-निर्देश', 'इक्के वाला', 'सच्चा कवि' तथा 'बन्ध्या'। ये सब कहानियाँ 'कौशिक' जी के सम्पूर्ण कथा-साहित्य की कलागत तथा विषयगत विशेषताओं का ज्ञान कराने में समर्थ हैं। विभिन्न वर्गों के अन्तर्गत उनकी कहानियों के जिन गुणों का हम ऊपर उल्लेख कर चुके हैं वे सभी न्यूनाधिक रूप में इन कहानियों में मिलते हैं। इन सभी कहानियों का परिचय न देकर कुछ ऐसी कहानियों का परिचय देना उपयुक्त होगा जो इनके सभी वर्गों की प्रतिनिधि हों तथा अपने वर्ग विशेष में आने वाली अन्य कहानियों में श्रेष्ठ हों। 'उद्धार' 'पेरिस की नर्तकी', 'वह प्रतिमा', 'ताई', स्वाभिमानी नमक हलाल', 'साध की होली', 'रक्षा बन्धन', 'एप्रिल फूल', 'नौकरी का पेशा', 'इक्के वाला महान आत्मा है', तथा 'रव-निर्देश' आदि कहानियाँ 'कौशिक' जी के कथा-साहित्य में सर्वश्रेष्ठ स्थान रखती हैं तथा कहानीकार के सम्पूर्ण कहानी-साहित्य की प्रमुख

प्रवृत्तियों तथा विशिष्टताओं को पाठकों के मस्तिष्क में प्रतिबिम्बित करने में सम
हो सकेंगी।

उद्धार

यह कहानी 'कौशिक' जी की सामाजिक कहानियों में अपना विशिष्ट स्था
रखती है. इसकी रचना समाज के पूँजीपति वर्ग की शोषण वृत्ति को लेकर की ग
है। पूँजीपति अपने लाभ के लिए एक ओर श्रमिकों की मजदूरी में अधिकाम कटौत
करता है, दूसरी ओर ग्राहकों से अधिकाधिक मूल्य प्राप्त कर महँगाई की स्थिति
उपस्थित करता है। 'कौशिक' जी ने पूँजीपति वर्ग की इन दोनों प्रवृत्तियों का, कर्म
चारियों द्वारा नई फर्म खोलकर उसमें श्रमिकों के लिए उचित पारिश्रमिक की
व्यवस्था कर, समाधान प्रस्तुत किया है। अतः यह कहानी केवल समस्या का स्पष्टी-
करण मात्र न रहकर नवीन कार्य-प्रणाली का दृष्टिकोण भी सम्मुख रखती है।
नई फर्म खोलने का क्रियात्मक सुझाव इस कहानी की वह विशेषता है जो सम्भवत
इससे पूर्व किसी अन्य कहानी में दृष्टिगत नहीं होती।

सुशीला की माँ गुलाबचन्द की फर्म में कपड़ों पर कशीदाकारी का कार्य करत
हैं। गुलाबचन्द पूँजीपति वर्ग का प्रतिनिधि है जो अपने कारीगरों से कम कीमत में
कपड़ों पर कशीदा करवा कर ग्राहकों को बहुत अधिक मूल्य पर विक्रय करता था।
व्रजबिहारी नामक एक अन्य पात्र ने गुलाबचन्द की इस चाल पर दृष्टि डाली। उसने
सुशीला की माँ द्वारा कशीदा किये हुए लहँगे को अपने मित्र कृष्णस्वरूप के घर मे
देखा था। सुशीला की माँ से पूछने पर जब उसे ज्ञात होता है कि उन्हें केवल आठ
रुपये पारिश्रमिक के रूप में प्राप्त हुए, जबकि गुलाबचन्द ने कृष्णस्वरूप से कशीदा-
कारी के चालीस रुपये प्राप्त किये तो वह कृष्णस्वरूप के सहयोग से एक अन्य फर्म
'कृष्ण ऐंड कम्पनी एम्ब्रायडर्स' खुलवाता है, जिसमें कारीगरों को पुरानी फर्मों से
अधिक सुविधाएँ प्रदान करने की व्यवस्था की गई। एक विज्ञप्ति प्रकाशित की गई
कि इस फर्म में कार्य करने वाले कारीगरों को उनके कार्य का आधा भाग मजदूरी-
स्वरूप दिया जायेगा तथा फर्म के वार्षिक लाभ में से भी कुछ भाग दिया जायेगा।
इन सुविधाओं के कारण पुरानी फर्मों के सब कर्मचारी इस नई फर्म में आ गये थे।
गुलाबचन्द की तथा अन्य इसी प्रकार की पुरानी फर्में असफल हो गई। सुशीला की
माँ तथा अन्य सभी कारीगर सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने लगे।

इस कहानी के अन्तर्गत लेखक की सुधारवादी प्रवृत्ति प्रधान रूप से रही है,
जिससे फलस्वरूप समाज की यथार्थ स्थिति का चित्रण करते हुए सुन्दर आदर्श की
कल्पना की गई है। इसके पात्र समाज के दो वर्ग विशेषों के प्रतिनिधि-स्वरूप प्रस्तु

'सद्भाव' 'अन्तिम भेंट', 'रक्षा-बन्धन', साध की होली', 'ऐप्रिल फूल', 'पाकिस्तान', 'अशिक्षित का हृदय', 'युग-धर्म', 'पेरिस की नर्तकी', 'स्वतन्त्रता', 'जागरण', 'दाँत का दर्द', 'अबला' 'पूजा का रुपया', 'सनून', 'माता का हृदय', 'डोला', 'सेवाव्रिह', 'कम्यूनिस्ट सभा', 'मुन्शी जी का ब्याह', 'बेदखली', 'भ्रम', 'समर्पण', 'माता की सीख', 'पत्रकार' तथा 'सच्चा कवि' आदि इसी वर्ग के अन्तर्गत आती हैं। इनमें लेखक ने प्रसंगानुकूल पात्रों के चरित्र-चित्रण, वातावरण के चित्रण तथा व्यक्तिगत विचारों एवं भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिये यथास्थान कई प्रकार की शैलियों का प्रयोग करके कहानियों में रोचकता लाने का प्रयास किया है अतः इन्हें मिश्र शैली में रचित कहानियाँ कहा जा सकता है।

'कौशिक' जी की कुछ प्रमुख कहानियों का परिचय

'कौशिक' जी के कथा-साहित्य का वर्गीकरण करते हुए विभिन्न वर्गों के अन्तर्गत आने वाली कहानियों की विशेषताओं का उल्लेख करने के पश्चात् उनकी कुछ प्रमुख कहानियों का परिचय देना उपयुक्त होगा जो उक्त सभी वर्गों में से किसी न किसी का प्रतिनिधित्व करती हों। इस प्रकार से प्रमुख कहानियों का चयन करना एक कठिन समस्या है। प्रत्येक लेखक की कुछ रचनाएँ ऐसी होती हैं जो पाठकों को विशेष रूप से प्रभावित करती हैं इसलिए उन्हें लेखक की प्रमुख रचनाएँ स्वीकार कर लिया जाता है। विभिन्न आलोचकों ने 'कौशिक' जी के कथा-साहित्य पर प्रकाश डालते हुए जिन कहानियों का विशेष रूप से उल्लेख किया है वे ये हैं—'रक्षा बंधन', 'ताई', 'वह प्रतिमा', 'उद्धार', 'विधवा', 'स्वाभिमानी नमक हलाल', 'नौकरी का पेशा', 'पेरिस की नर्तकी', 'माता का हृदय', 'मोह', 'नास्तिक प्रोफेसर', 'अशिक्षित का हृदय', 'साध की होली', 'कठोर दण्ड', 'गंवार', 'एप्रिल फूल', 'पथ-निर्देश', 'इक्के वाला', 'सच्चा कवि' तथा 'बन्ध्या'। ये सब कहानियाँ 'कौशिक' जी के सम्पूर्ण कथा-साहित्य की कलागत तथा विषयगत विशेषताओं का ज्ञान कराने में समर्थ हैं। विभिन्न वर्गों के अन्तर्गत उनकी कहानियों के जिन गुणों का हम ऊपर उल्लेख कर चुके हैं वे सभी न्यूनाधिक रूप में इन कहानियों में मिलते हैं। इन सभी कहानियों का परिचय न देकर कुछ ऐसी कहानियों का परिचय देना उपयुक्त होगा जो इनके सभी वर्गों की प्रतिनिधि हों तथा अपने वर्ग विशेष में आने वाली अन्य कहानियों से श्रेष्ठ हों। 'उद्धार' 'पेरिस की नर्तकी', 'वह प्रतिमा', 'ताई', स्वाभिमानी नमक हलाल', 'साध की होली', 'रक्षा बन्धन', 'एप्रिल फूल', 'नौकरी का पेशा', 'इक्केवाला 'महान पापी है', तथा 'पथ-निर्देश' आदि कहानियाँ 'कौशिक' जी के कथा-साहित्य में सर्वश्रेष्ठ स्थान रखती हैं तथा कहानीकार के सम्पूर्ण कहानी-साहित्य की प्रमुख

प्रवृत्तियों तथा विशिष्टताओं को पाठकों के मस्तिष्क में प्रतिबिम्बित करने में समर्थ हो सकेंगी।

उद्धार

यह कहानी 'कौशिक' जी की सामाजिक कहानियों में अपना विशिष्ट स्थान रखती है, इसकी रचना समाज के पूँजीपति वर्ग की शोषण वृत्ति को लेकर की गई है। पूँजीपति अपने लाभ के लिए एक ओर श्रमिकों की मजदूरी में अधिकतम कटौती करता है, दूसरी ओर ग्राहकों से अधिकाधिक मूल्य प्राप्त कर महँगाई की स्थिति उपस्थित करता है। 'कौशिक' जी ने पूँजीपति वर्ग की इन दोनों प्रवृत्तियों का, कर्मचारियों द्वारा नई फर्म खोलकर उसमें श्रमिकों के लिए उचित पारिश्रमिक की व्यवस्था कर, समाधान प्रस्तुत किया है। अतः यह कहानी केवल समस्या का स्पष्टीकरण मात्र न रहकर नवीन कार्य-प्रणाली का दृष्टिकोण भी सम्मुख रखती है। नई फर्म खोलने का क्रियात्मक सुझाव इस कहानी की वह विशेषता है जो सम्भवतः इससे पूर्व किसी अन्य कहानी में दृष्टिगत नहीं होती।

सुशीला की माँ गुलाबचन्द की फर्म में कपड़ों पर कसीदाकारी का कार्य करती है। गुलाबचन्द पूँजीपति वर्ग का प्रतिनिधि है जो अपने कारीगरों से कम कीमत में कपड़ों पर कसीदा करवा कर ग्राहकों को बहुत अधिक मूल्य पर विक्रय करता था। व्रजबिहारी नामक एक अन्य पात्र ने गुलाबचन्द की इस चाल पर दृष्टि डाली। उसने सुशीला की माँ द्वारा कसीदा किये हुए लहँगे को अपने मित्र कृष्णस्वरूप के घर में देखा था। सुशीला की माँ से पूछने पर उसे ज्ञात होता है कि उन्हें केवल आठ रुपये पारिश्रमिक के रूप में प्राप्त हुए, जबकि गुलाबचन्द ने कृष्णस्वरूप से कसीदाकारी के चालीस रुपये प्राप्त किये तो वह कृष्णस्वरूप के सहयोग से एक अन्य फर्म 'कृष्ण ऐंड कम्पनी एम्ब्रायडर्स' खुलवाता है, जिसमें कारीगरों को पुरानी फर्मों से अधिक सुविधाएँ प्रदान करने की व्यवस्था की गई। एक विज्ञप्ति प्रकाशित की गई कि इस फर्म में कार्य करने वाले कारीगरों को उनके कार्य का आधा भाग मजदूरी-स्वरूप दिया जायेगा तथा फर्म के वार्षिक लाभ में से भी कुछ भाग दिया जायेगा। इन सुविधाओं के कारण पुरानी फर्मों के सब कर्मचारी इस नई फर्म में आ गये और गुलाबचन्द की तथा अन्य इसी प्रकार की पुरानी फर्में असफल हो गई। सुशीला की माँ तथा अन्य सभी कारीगर सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने लगे।

इस कहानी के अन्तर्गत लेखक की सुधारवादी प्रवृत्ति प्रधान बन गई रही है जिसके फलस्वरूप समाज की यथार्थ स्थिति का चित्रण करते हुए नूतन आदर्श की स्थापना की गई है। इसके पात्र समाज के दो वर्ग विशेषों के प्रतिनिधि-स्वरूप समक्ष

आते हैं जिनकी प्रवृत्तियों का विश्लेषण करते हुए लेखक ने अपनी समाज-सुधार की भावना को व्यक्त किया है। इस कहानी की रचना विशेषतः वर्णनात्मक तथा कथोपकथन की शैली में हुई है। एक घटना को लेकर लेखक ने समाज के एक महत्वपूर्ण अंग पर दृष्टि डाली है।

पेरिस की नर्तकी

प्रस्तुत राजनीतिक कहानी का महत्व 'कौशिक' जी के सम्पूर्ण कथा-साहित्य में एकाकी ही है। इसकी रचना फ्रांस की उस राजनीतिक पृष्ठभूमि पर की गई है जब हिटलर की सेना फ्रांस की भूमि को पदाक्रान्त करती हुई पेरिस के निकट पहुँच कर मेजिनो दीवार को क्षत-विक्षत कर चुकी थी। जर्मन के युद्ध से आक्रान्त फ्रांस की स्थिति का यथार्थ चित्रण किया गया है।

फ्रांस के राजनीतिज्ञ दो प्रमुख विरोधी दलों में विभक्त थे—पूँजीपति दल तथा साम्यवादी दल। पूँजीपति वर्ग अपने ऐश-आराम में लिप्त था तथा हिटलर के गुप्तचरों से मिला हुआ था। फ्रांस की प्रसिद्ध नर्तकी-एण्ड्री भी इसी दल के साथ मिलकर नृत्यकला की प्रशंसा तथा युद्ध के विषय में घृणास्पद विचार प्रस्तुत करके पूँजीपति वर्ग को हिटलर से सन्धि करने के लिए उकसाती है। प्रसिद्ध पूँजीपति मोशिये प्लेनशोने तथा उसके साथी एण्ड्री के विचारों से प्रभावित होकर हिटलर से सन्धि करने में ही अपना कल्याण समझते हैं।[1] ये योग युद्ध में हिटलर से पराजित होकर उसके गुलाम बनने से भी भयभीत होते हैं तथा विजय होने में भी उन्हें इस बात का भय बना रहता है कि विजय होने का श्रेय साम्यवादियों को ही मिलेगा और देश की प्रभुसत्ता भी उन्हीं के हाथ में चली जायेगी।

साम्यवादी दल हिटलर से सन्धि करने के विरुद्ध था। इस दल का नेता मोशिये सावेलिये एण्ड्री की गतिविधियों पर पूर्ण रूप से दृष्टि रखता था। स्थिति गंभीर थी, पूँजीपति दल के व्यक्ति जो स्वयं को फ्रांस का शासक समझते थे, रेनो सरकार को समाप्त कर पेताँ सरकार स्थापित करने के पक्ष में थे। इस कार्य में उन्हें सफलता प्राप्त हुई और साम्यवादी दल को हताश होना पड़ा। परन्तु देशभक्त

---

१. "यदि पराजित होकर हिटलर के गुलाम बने तब भी खतरा और यदि विजयी हुए तब भी खतरा; इसलिए हमारा कल्याण हिटलर से संधि कर लेने में ही है।"—'पेरिस की नर्तकी'[कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ०—८६।

मोशिये सावेलिये चुप रह जाने वाला व्यक्ति नहीं था। उसने अपने साथियों को एण्ड्री के पीछे लगा रखा था, जो जर्मन-शिविरों में जाकर फ्रांस के साथ विश्वासघात करने के प्रयत्न में संलग्न थी। मोशिये सावेलिये के साथी अन्त में इस नर्तकी-एण्ड्री को, जब वह एक जर्मन-कैम्प से लौट रही थी, बन्दी बनाने में सफल होते हैं और एक गुप्त स्थान पर लेजाकर प्राण दण्ड दे देते हैं।

एण्ड्री, एक प्रसिद्ध नर्तकी, रूप की साक्षात् प्रतिमा तथा एक विख्यात कलाकार थी। परन्तु इन गुणों का प्रयोग उसने देश-द्रोह के मार्ग में किया अतः सावेलिये उससे कहता है, "जो सौन्दर्य तथा कला हमे नपुंसक बनाती है, हमारे शरीर में कायरता का संचार करती है और इससे भी बढ़कर जो हमारे साथ, अपने देश के साथ विश्वासघात करती है, उस सौन्दर्य तथा कला का नष्ट हो जाना ही अच्छा है। हमें इस समय रंगमंच का सौन्दर्य, रंगमंच की कला की आवश्यकता नहीं है। हमें आवश्यकता है—युद्ध-क्षेत्र के सौन्दर्य और युद्धक्षेत्र की कला को।"[१]

पैरिस की युद्धकालीन परिस्थिति का यथार्थ चित्र उपस्थित करते हुए कहानीकार ने राजनीतिक पक्ष के दो पहलुओं पर प्रकाश डाला है तथा मिश्र शैली का प्रयोग करते हुए सुन्दर ढंग से पात्रों के चारित्रिक गुणों का उद्घाटन किया है। सावेलिये के द्वारा कहानी के प्रारम्भ में दृढ़ता पूर्वक कही गई यह उक्ति—"मैं एण्ड्री को देखने आया हूँ, एण्ड्री का नाच देखने नहीं आया।"[२] उसके दृढ़ चरित्र तथा देश की स्वतन्त्रता के लिये प्रयत्न की ओर संकेत करती है। नर्तकी का चरित्र पैरिस की समकालीन नर्तकियों के अनुरूप ही प्रस्तुत किया है तथा यथार्थवादी दृष्टिकोण को अपनाया है। कहानी का अन्त बहुत सुन्दर है जिसमें देशभक्ति की स्पष्ट छाप दिखाई पड़ती है साथ ही कला की उपादेयता पर भी प्रकाश डाला गया है। कला के उद्देश्य का स्पष्टीकरण साम्यवादी नेता के शब्दों में प्रस्तुत किया गया है। ऐसी कला जो राष्ट्र को विलासिता की ओर आकृष्ट करती हुई देश को पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ दे, कला नहीं कहला सकती।

प्रस्तुत कहानी में लेखक का उद्देश्य देशद्रोह तथा देशप्रेम का समानान्तर चित्र उपस्थित करते हुए, देश की पराजय के कारण का चित्र प्रस्तुत करना तथा उसे दूर

---

१. 'पेरिस की नर्तकी' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० ६७।
२. " " " ८२।

करता रहा है। सावेलिये और एण्ड्री के द्वारा लेखक ने देशप्रेम तथा देशद्रोह का साकार चित्र उपस्थित करते हुए पराजय के कारण-एण्ड्री का वध करवा कर उद्देश्य की पूर्ति की है। युद्धकालीन परिस्थिति, उसके आतंक और जन-जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का वातावरण प्रस्तुत करने में 'कौशिक' जी को प्रभावपूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। यथास्थान वर्णनात्मक, नाटकीय तथा प्रवाहमयी शैली के प्रयोग से कहानी अत्यन्त रोचक बन गई है।

मृत प्रतिमा

इस कहानी में 'कौशिक' जी ने इतिवृत्त को प्रमुखता प्रदान करते हुए आत्मचरितात्मक शैली में कहानी की रचना की है तथा समाज के पारिवारिक जीवन में पति-पत्नी के पारस्परिक प्रेम-सम्बन्धी विषय को आधार बनाया है। पत्नी के अतिरिक्त पति की सुख-सुविधा का ध्यान रखने वाले कुछ अन्य व्यक्ति माँ, भाभी इत्यादि जब परिवार में होते हैं तब पति-पत्नी के व्यवहार में जो परिवर्तन आ जाता है, उस समस्या को लेकर कहानी लिखी गई है। कहानी का प्रमुख पात्र अपने मुँह से अपने जीवन की घटनाओं का वर्णन करता है उसके हृदय का अन्तर्द्वन्द्व पश्चाताप के रूप में व्यक्त हुआ है।

चमेली के राजयक्ष्मा रोग से पीड़ित हो जाने पर उसका पति उसकी ओर से उदासीन हो जाता है, क्योंकि अब उसमें वह सौन्दर्य नहीं रहा था जो उसे अपनी ओर आकृष्ट कर सके। दूसरे वह इस भय से पत्नी से दूर रहने लगा कि कहीं रोग उसे न लग जाये। वह नशेबाजी आदि दुर्व्यसनों में फँस गया। चमेली हर प्रकार से पति की सुख-सुविधा का ध्यान रखती परन्तु उसे कभी जीवन में पत्नी की चिन्ता नहीं रही। चमेली ने उसे दूसरा विवाह करने की सलाह दी परन्तु उसने यह कह कर अस्वीकार कर दिया कि घरवाले उसे इस कार्य के लिये आज्ञा नहीं देंगे।

चमेली की दशा दिन-प्रतिदिन बिगड़ती जाती है और उसका अन्त समय निकट आ जाता है। तब उसके पति को उसकी चिन्ता होती है तथा इतने दिनों तक उससे विमुख रहने पर पश्चाताप होता है। अब उसे पत्नी में वही सौन्दर्य दिखाई पड़ता है जो उसकी स्वस्थावस्था में था।[1] वह अपनी पत्नी के समक्ष अपनी भूल का

---

१. आज छः वर्ष पश्चात मुझे उसकी आँखों में उसके मुख पर वही सौन्दर्य दिखाई पड़ा, जो छः वर्ष पूर्व था।"' ओफ़! मैंने कितना अनर्थ किया, जो इसकी ओर से इतना उदासीन हो गया।"— 'चित्रशाला' [कहानी-संग्रह]—पृ० १२४-१२५।

प्रायश्चित्त करता है तथा उसे धैर्य बँधाने का प्रयत्न करता है, परन्तु चमेली को इस परिवर्तन से क्लेश होता है। वह पति के अपने प्रति प्रेम प्रकट करने पर मृत्यु से भय का अनुभव करती है इसलिए पति से वही उदासीनता का भाव रखने तथा अपने पुत्र शानू को कभी न डाँटने का अनुरोध करती है। पति अन्त समय में पत्नी के प्रेम के मूल्य को पहचान पाता है। अब चमेली उसके लिए एक ऐसी प्रतिमा बन जाती है जिसकी स्मृति को वह जीवन भर नहीं भुला सकता।

प्रस्तुत कहानी में कहानीकार ने यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि किसी व्यक्ति की वास्तविक पहचान उसकी मृत्यु के पश्चात् होती है। नष्ट होने पर ही वस्तु का मूल्य ज्ञात होता है। इस कहानी की कथा मानव-जीवन के यथार्थ धरातल से ली गई है। भावुकतापूर्ण तथा कवित्वमय भाषा-शैली में लेखक ने इसकी रचना की है। डॉ० परमानन्द श्रीवास्तव ने इसके विषय में लिखा है—"वह प्रतिमा' शीर्षक कहानी घटना और उसके वैचित्र्य से उतनी ही दूर है और एक सूक्ष्म लाक्षणिकता से अनुप्राणित है। कथानक का प्रारम्भ भी मानसिक व्याकुलता के एक संकेत से होता है। तथा सम्पूर्ण कहानी एक संकेतात्मक पद्धति द्वारा अभिव्यक्त हो सकी है।"[1] कहानी-कला की दृष्टि से यह कहानी बहुत सुन्दर बन पड़ी है।

ताई

यह 'कौशिक' जी की प्रसिद्ध सामाजिक चरित्रप्रधान कहानी है जिसमें पारिवारिक जीवन के व्यक्तिगत पारस्परिक प्रेम-सम्बन्ध की समस्या को लेकर उस निस्सन्तान स्त्री के चरित्र का चित्रण किया गया है जिसके मन में प्रतिक्षण दूसरे के बच्चों के प्रति वात्सल्य तथा घृणा का द्वन्द्व चलता रहता है।

रामेश्वरी के पति बाबू रामजीदास के छोटे भाई की दो सन्तानें हैं—पुत्र मनोहर तथा पुत्री चुन्नी। निस्सन्तान होने के कारण रामजीदास का स्नेह इन बच्चों के प्रति बहुत अधिक है। उन्हें सन्तान की कमी नहीं खटकती। परन्तु रामेश्वरी को उनका इन बच्चों के प्रति इतना स्नेह अच्छा नहीं लगता। कभी वह बच्चों से घृणा करती है कभी प्रेम। प्रारम्भ में मनोहर के यह कहने पर कि वह ताई को रेलगाड़ी में नहीं बिठाएगा, उसके क्रोध की सीमा नहीं रहती। वह बच्चों को गोदी से ढकेल देती है। इतने पर भी एकान्त में छत पर बच्चों को हँस-हँसकर खेलते हुए देखकर उन्हें प्यार किये बिना उसका मन नहीं मानता। उसके अन्तर्मन में बच्चों के

---

१. 'हिन्दी कहानी की रचना प्रक्रिया'—पृ० ११४।

लिये प्रेम तथा ममत्व की जो भावना भरी हुई है वह अनुकूल अवसर प्राप्त कर प्रकट हो जाती है। परन्तु वह बच्चों के प्रति अपनी प्रेम-भावना को पति के समक्ष प्रकट करना नहीं चाहती थी। इसीलिए जब रामजीदास मनोहर के लिए रेलगाड़ी लेकर छत पर जाते हैं और रामेश्वरी को बच्चों को प्यार से गोद में लिये हुए देखकर कह उठते हैं, "आज तो तुम बच्चों को बड़ा प्यार कर रही थीं, इससे मालूम होता है कि तुम्हारे हृदय में भी इनके प्रति कुछ प्रेम अवश्य है।"[1] तो वह क्रोधित होकर अपनी निर्बलता पति पर प्रकट हो जाने के कारण बच्चों को जली-कटी बातें सुनाती है। इसके अतिरिक्त वह नहीं चाहती थी कि रामजीदास उन बच्चों को इतना अधिक स्नेह करें। सन्तान की उत्कट लालसा के कारण उन्हें पति की उपेक्षा भी सहनी पड़ती है।[2] उसके मन में अन्तर्द्वन्द्व पैदा होता है कि इन बच्चों के कारण ही उसके पति उसे कम प्रेम करते हैं और हर समय बुरा-भला कहते रहते हैं। उसके मस्तिष्क में सन्तान का अभाव और पति के भाई की संतान के प्रति अनुराग की भावना-विषयक विचार चक्कर काटते रहते हैं।

एक दिन वह छत पर खड़ी थी। मनोहर पतंग मँगवाने का हठ करता है तो वह डाँट देती है, परन्तु अधिक हठ करने पर करुणापूर्वक सोचती है कि यह उसका पुत्र होता तो वह संसार की सबसे भाग्यवान स्त्री होती। तत्काल ही वह मनोहर को प्यार करने वाली थी कि वह कह उठता है "तुम हमें पतंग नहीं मँगवा दोगी, तो ताऊजी से कहकर तुम्हें पिटवावेंगे।" यह सुनकर वह क्रोधित होकर कहती है, "जा, कहदे अपने ताऊजी से। देखूँ, वह मेरा क्या कर लेंगे।"[3] मनोहर पतंग देखने लगता है। कुछ ही क्षण पश्चात् एक पतंग उनकी छत के छज्जे से होकर नीचे आँगन में आ गिरती है। मनोहर उसे पकड़ने के लिए छज्जे पर जाता है और आँगन में देखकर प्रसन्न होता है। परन्तु जैसे ही वह नीचे जाने के लिए सीढ़ियों से घूमता है, पैर फिसल जाता है और वह नीचे गिरने से बचने के लिए मुँडेर को हाथ से पकड़ कर ताई को आवाज देता है, परन्तु रामेश्वरी सोचती है कि मरने दो पाप कट जाएगा। मनोहर के दोबारा आवाज देने पर वह व्याकुल होकर उसकी रक्षा के लिए दौड़ती है, इतने में ही मनोहर के हाथ से मुँडेर छूट जाती है और वह नीचे गिर जाता है। रामेश्वरी चीख मारकर बेहोश होकर छज्जे पर गिर जाती है तथा चार

---

१. 'चित्रशाला' [[illegible]]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० ३० ।
२. "तुम्हें मुझसे बच्चे ही बड़ी अधिक प्यारे हैं।"—'चित्रशाला', पृ० ३१ ।
३. 'चित्रशाला'—पृ० ३३ ।

में एक सप्ताह तक बेहोश पड़ी रहती है। इस स्थिति में कभी मनोहर को बचाने के लिए आवाज देती है तथा कभी पश्चाताप करती है कि वह स्वयं बचाना चाहती तो बचा सकती थी। छज्जे से गिरने के कारण मनोहर के पैर में चोट आ गई थी, जो कुछ ही दिनों में ठीक हो गई। ज्वर से मुक्ति प्राप्त कर ताई मनोहर को देखने की इच्छा प्रकट करती है तथा घृणा त्यागकर उनबच्चों को अपने बच्चों के समान ही प्यार करने लगती है। वस्तुतः ताई के चरित्र में इस घटना के द्वारा लेखक ने आकस्मिक परिवर्तन ला दिया है। ताई का चरित्र एक महत्त्वपूर्ण चरित्र है। श्री राजनाथ शर्मा ने लिखा है—"ताई की स्पर्धा और स्नेह का मनोवैज्ञानिक द्वन्द्व यदि मनोविश्लेषण पद्धति के द्वारा किया जाता तो ताई का चरित्र हिन्दी-साहित्य के अद्वितीय चरित्रों में गिना जाता।"[१]

प्रस्तुत कहानी में घटनाओं का आधिक्य नहीं है। प्रत्येक घटना ताई के मानसिक भावों के स्पष्टीकरण तथा उसके चरित्रगत परिवर्तन के लिए गुंफित की गई है। इसमें कहानीकार ने यह प्रदर्शित करने का प्रयत्न किया है कि "ममत्व से प्रेम उत्पन्न होता है और प्रेम से ममत्व।" आदर्श ताऊ और ताई के चरित्रों का निर्माण करते हुए प्रस्तुत परिस्थितियों में उत्पन्न होने वाली पारिवारिक कलह और उसके दुष्परिणाम, प्रायश्चित तथा अन्त में प्रेमपूर्ण वातावरण उपस्थित करके कथा को समाप्त कर दिया गया है। कहानी विषय की दृष्टि से अत्यन्त मार्मिक तथा रोचक है परन्तु इसमें वर्णनात्मक शैली का प्रयोग किया गया है जिससे इसका महत्त्व कुछ कम हो गया है। डॉ० सुरेश सिनहा के अनुसार—"यह कदाचित् यथार्थ पर आदर्शवाद को आयाम प्रतिष्ठा करने के लिए ही किया गया है, जिससे इसमें इति-वृत्तात्मक गुणों का समावेश अधिक हो गया है।...चरम सीमा के बाद भी भूमिका और उपसंहार का संयोजन किया गया है और आदर्शवाद की पूर्ण एवं स्पष्ट रूप में प्रतिष्ठापना की गई है।"[२]

स्वाभिमानी नमक हलाल

यह कहानी 'कौशिक' जी की चरित्र-प्रधान कहानियों में अपना प्रमुख स्थान रखती है। इसमें एक स्वाभिमानी तथा स्वामिभक्त सेवक के चरित्र का अत्यन्त कुशलता के साथ चित्रण किया गया है। मटरूमल जी सेठ छंगामल के स्वामिभक्त

---

१. 'हिन्दी कहानियाँ [आलोचनात्मक अध्ययन]—पृ० १८८।
२. 'हिंदी कहानी : उद्भव और विकास'—पृ० ३७४।

मुनीम थे। अपनी मृत्यु से पूर्व उन्होंने अपने पुत्र चुन्नूमल को उनके संरक्षण में सौंप कर पुत्र से उनकी आज्ञा पालन करने को कहा। परन्तु छंगामल की मृत्यु के कुछ दिनों पश्चात् चुन्नूमल ने स्वयं को मटरूमल जी के प्रभाव से मुक्त कर लिया और मटरूमल जी नौकरी से पृथक हो गए। चुन्नूमल ने मटरूमल जी को उनकी अब तक की सेवाओं के उपलक्ष्य में पेंशन देनी चाही परन्तु स्वाभिमानी मटरमल ने पेंशन लेने से इन्कार कर दिया।

चुन्नूमल मटरूमल जी के प्रभाव से मुक्त होकर अपने मित्रों की आवारा चौकड़ी में फँस गया और सेठ छंगामल जी का एकत्रित किया हुआ पर्याप्त धन उसने नष्ट कर डाला। परिणामस्वरूप एक दिन किसी व्यक्ति के दो लाख रुपयों की दर्शनी हुण्डी लेकर आने पर उसका तत्काल ही भुगतान करने में वह असमर्थ हो गया। इस विकट स्थिति में चुन्नूमल को मटरूमल की याद आई। वह उसके पास गया तो मटरूमल जी तुरन्त कार्यालय में आये और फर्म की प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए उन्होंने अत्यन्त कुशलता के साथ हुंडी को अपने बाँचते हुए हाथों से अँगीठी पर गिराकर जला दिया। साथ ही हुंडी लाने वाले से कहा, "कोई चिन्ता नहीं... तुम हुंडी की नकल लाओ, और भुगतान ले जाओ। अभी ले आओ, अभी भुगतान मिल जाय।"[1] इस प्रकार मटरूमल जी ने अपनी व्यापारिक कुशलता के फलस्वरूप लाला छंगामल की पुरानी साख को नष्ट होने से बचा लिया। हुंडी आने तक भुगतान करने के लिए रुपये का प्रबन्ध करने का समय मिल गया, अन्यथा ऐसी परिस्थिति में फर्म दिवालिया हो जाती।

कहानीकार ने एक स्वामिभक्त, निपुण मुनीम के स्वाभिमानी चरित्र का बड़ी कुशलता के साथ चित्रण किया है। स्वाभिमान के कारण ही वह चुन्नूमल के एक बार कहने पर नौकरी छोड़ देता है, पेंशन स्वीकार नहीं करता तथा अन्त में चुन्नूमल के रोकने पर भी नहीं रुकता, कार्य समाप्त करते ही चला जाता है। कहानी आद्योपांत बहुत रोचक है।

साध की होली

प्रस्तुत कहानी समाज के जमींदार वर्ग पर आधारित चरित्र-प्रधान कहानी है तथा इसकी रचना मिश्र शैली में हुई है। इस कहानी में 'कौशिक' जी ने सज्जाद हुसैन के रूप में एक अय्याश और नृशंस जमींदार के चरित्र का चित्रण किया है।

---

१ 'चित्रशाला' (कहानी-संग्रह)—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक'—पृ० ११।

सज्जाद हुसैन एक दुश्चरित्र व्यक्ति था जो अपनी जमींदारी के निर्धन काश्तकारों की बहू-बेटियों को कुदृष्टि से देखता तथा उन्हें फुसलाने का प्रयत्न करता था।

एक दिन शंकरबख्शसिंह की पत्नी को, जब वह अकेली मार्ग में आ रही थी, सज्जादहुसैन ने घेर लिया और फुसलाने का प्रयत्न किया। शंकरबख्शसिंह की पत्नी एक अच्छे चरित्र वाली स्त्री थी, उसपर जमींदार की बातों का कोई प्रभाव न पड़ा, घर जाकर उसने इस घटना की सूचना पति को दी, उसके पति में सज्जादहुसैन के विरुद्ध आवाज उठाने का साहस नहीं था। इसलिए उसने बात को दबाने के लिए पत्नी से कहा, "अब तुम चिंता मत करो, तुम्हारे साथ कल से मुहल्ले की स्त्रियाँ जाया करेंगी।"[1]

शंकरबख्शसिंह पत्नी को आश्वासन देकर संतुष्ट हो गया परन्तु पत्नी के हृदय में जमींदार के प्रति क्रोध की ज्वाला धधकती रही। एक दिन जमींदार के द्वारा भेजी हुई एक वृद्धा ने शंकरबख्शसिंह की पत्नी के पास आकर कहा कि जमींदार ने कहलवाया है, "सीधी तरह मान जायँगी; तो निहाल कर देंगे, नहीं तो बड़ी दुर्दशा कराएँगे, रात में जबरदस्ती उठवा मँगाएँगे।"[2] शंकरबख्शसिंह की पत्नी ने क्रोध में उत्तर दिया कि अभी उसके चार भाई जीवित हैं यदि जमींदार उसे बहुत परेशान करेंगे तो पछताएँगे तथा उस वृद्धा को कभी अपने पास आने का साहस न करने के लिए कहा।

उक्त घटना के तीन दिन पश्चात् होली का त्यौहार था। शंकरबख्शसिंह की पत्नी के देवर—रामसिंह ने होली से एक दिन पूर्व भाभी से होली खेलने के विषय में वार्तालाप किया तो वह बोली, "मेरे साथ होली खेलने को रंग कहाँ पाओगे?" देवर ने इस बात का रहस्य ज्ञात किया तो भाभी ने जमींदार की सब बातें बता दीं। देवर ने भाभी को आश्वासन देते हुए कहा, "तुमने होली खेलने की साध है, उसे पूरी करके छोड़ूँगा चाहे जो हो, चाहे प्राण ही क्यों न चले जायँ।"

अगले दिन देवर से पहले शंकरबख्शसिंह पत्नी के साथ होली खेलने आता है तो उसकी पत्नी कहती है कि वह पहले देवर के साथ होली खेलेगी। उसी समय देवर जमींदार के रक्त से भरा लोटा लेकर अपनी भाभी के साथ होली खेलने के लिए आता है और होली खेलकर अपनी साध पूरी करता है। पुलिस आ जाती है और रामसिंह को भाभी से सदैव के लिये विदा लेकर जाना पड़ता है।

---

१. 'साध की होली' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ ६-७।
२. " " " " पृष्ठ ८।

प्रस्तुत कहानी में 'कौशिक' जी ने देवर भाभी के पवित्र स्नेह तथा साहस-पूर्ण चरित्रों का चित्रण किया है। देवर रामसिंह भाभी पर कुदृष्टि रखने वाले जमींदार सज्जादहुसैन का संहार कर भाभी के अपमान का प्रतिशोध लेता है तथा उसके रक्त से अपनी भाभी के साथ होली खेलकर अपनी तथा भाभी की साध पूरी करता है। कहानी का शीर्षक इसी घटना पर आधारित है तथा बहुत उपयुक्त है। भारतीय नारी के गौरव की प्रतिष्ठा करते हुए कहानीकार ने जमींदारी युग के व्यभिचारी और नपुंसक चरित्रों का यथार्थवादी चित्रण प्रस्तुत किया है। शंकर-बख्शसिंह के रूप में एक ऐसे दुर्बल चरित्र को प्रस्तुत किया है जिसके स्वाभिमान को जमींदारी निरंकुशता ने इस हद तक कुचल दिया है कि अपनी पत्नी के अपमान की बात सुनकर भी उसे क्रोध नहीं आता। जमींदारी युग के वातावरण को प्रस्तुत करने में लेखक को बड़ी सफलता मिली है। एक जमींदार है दुश्चरित्र और उसकी दुश्चरित्रता के प्रति विद्रोह करने की शक्ति उस ग्राम के किसी व्यक्ति में नहीं है। ग्राम-निवासी उसके द्वारा किये गये अत्याचारों को सहन करते हैं, उसके विरुद्ध आवाज नहीं उठा पाते। इस कुंठित वातावरण में रामसिंह और उसकी भौजी को साहसपूर्वक जमींदार के विरुद्ध खड़े करके लेखक ने महत्वपूर्ण चरित्रों की अवतारणा की है। कहानी बहुत रोचक है जिसका प्रभाव पाठक के मस्तिक पर बहुत देर तक बना रहता है।

रक्षा-बन्धन

यह 'कौशिक' जी की सर्वप्रथम मौलिक घटनाप्रधान कहानी है जिसका विषय समाज के धरातल से लिया गया है तथा प्राचीन युग की काल्पनिकता के स्थान पर यथार्थ में आने का प्रयास किया गया है। यद्यपि दैवी घटनाओं तथा संयोग-तत्वों के प्रयोग के कारण इस कहानी में प्राचीनता का आभास मिलता है क्योंकि जिस युग में इसकी रचना हुई उस समय कहानियों में इन्हीं तत्वों की प्रधानता रहती थी परन्तु लेखक का प्रथम मौलिक प्रयास होने के कारण उनके कथा-साहित्य में इस कहानी का विशेष महत्व है। कथा इस प्रकार है—

कहानी का प्रमुख पात्र घनश्याम धनोपार्जन के उद्देश्य से दक्षिण भारत के किसी नगर में चला जाता है। वहाँ से धन कमाकर जब वह अपने घर लौटता है तो उसकी माँ तथा बहिन उसे वहाँ नहीं मिलतीं। घनश्याम ने उन्हें छोड़कर जाने के पश्चात् उनकी कोई खोज खबर नहीं रखी, अतः वे उन्नाव छोड़कर कानपुर में निवास करने लगीं। घनश्याम सारे उन्नाव में उनकी खोज करके हार जाता है परन्तु उसे निराश होना पड़ता है।

एक दिन कानपुर के किसी मुहल्ले से गुजरते हुए उसकी दृष्टि एक लड़की पर पड़ी जो हाथ में कोई वस्तु लिये हुए अपने घर के द्वार पर खड़ी थी। घनश्याम आगे बढ़कर जैसे ही उसके निकट पहुँचा तो लड़की ने करुणापूर्ण दृष्टि से उसकी ओर देखा। घनश्याम ने उसके अश्रुपूरित नेत्रों को देखकर पूछा, "बेटी क्यों रोती हो?"[1] लड़की ने केवल 'राखी' शब्द कहा और घनश्याम ने उसका भाव समझकर दाहिना हाथ आगे बढ़ा दिया। लड़की ने प्रसन्न होकर उसके हाथ मे राखी बाँध दी। घनश्याम ने उसे दो रुपये देने चाहे, परन्तु वह केवल पैसे लेना चाहती थी। तब उसने आग्रहपूर्वक रुपये और चार आने पैसे उसे दे दिये। उसी समय मकान के अन्दर से किसी ने लड़की (सरस्वती) को अन्दर बुलाया और वह लडकी चली गई।

तत्पश्चात् घनश्याम लखनऊ में जाकर रहने लगा। बहुत खोज करने पर भी वह अपनी माँ तथा बहिन को ढूँढ पाने में असमर्थ रहा। वह अपने मित्र अमरनाथ से कभी-कभी इस प्रसंग पर वार्तालाप कर लेता था। राखी वाली घटना भी उसने अमरनाथ को बता दी थी।

पाँच वर्ष पश्चात् अमरनाथ उसके विवाह के लिए एक कन्या देखकर आता और घनश्याम से उस लड़की से विवाह करने का आग्रह करता है। लड़की की माँ लड़के को देखने की इच्छुक थी तथा घनश्याम ने भी लडकी को देखने की इच्छा प्रकट की। अमरनाथ घनश्याम को साथ लेकर लड़की के घर जाता है तो घनश्याम को देखकर लड़की की माँ पहिचान लेती हैं कि वही उनका पुत्र है जो कुछ वर्ष पूर्व उनसे बिछुड़ गया था और देखते ही वह अचेत हो जाती हैं तथा लड़की 'भैया-भैया' कहती हुई उससे लिपट जाती है। यह वही लड़की थी जिसने पाँच वर्ष पूर्व घनश्याम के हाथ में राखी बाँधी थी। प्रो० वासुदेव के अनुसार, "बालिका सरस्वती से घनश्याम का मिलन एक 'संयोग' है और फिर युवती सरस्वती से घनश्याम के मिलने को दैवी संयोग कहा जायगा। इस तरह की कहानी बड़ी अस्वाभाविक होती है।"[2] कहानी-लेखक का प्रमुख उद्देश्य नाटकीय प्रसंगों की सृष्टि करना रहता है, जिसके लिए दैव-घटनाओं और संयोगों का किसी-न किसी रूप में आश्रय लेना पड़ता है। इस दृष्टि से डॉ० श्रीकृष्णलाल के अनुसार, "कौशिक की कहानी 'रक्षा-बन्धन' में संयोग और दैव-घटना से ही एक मनोरंजक कहानी बन गई है।"[3] कुछ आलोचकों ने इस

---

1. 'रक्षाबन्धन' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ-१६० ।
2. 'हिन्दी कहानी और कहानीकार'—पृ०-१३६ ।
3. 'आधुनिक हिंदी साहित्य का विकास'—पृ०-३२७ ।

कहानी को चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' की 'उसने कहा था' कहानी के समकक्ष रखा है।

एप्रिल फूल

प्रस्तुत कहानी की रचना एक हास्यप्रधान सामाजिक घटना के आधार पर की गई है। इसमें 'कौशिक' जी ने एक ओर ऐसे व्यक्ति का चरित्र उपस्थित किया है जो अत्यन्त सीधा होने पर भी अपने को बहुत चालाक प्रदर्शित करना चाहता है और दूसरी ओर उन व्यक्तियों पर व्यंग्य करता है जो सर्वत्र दूसरों को नीचा दिखाने के प्रयत्न में लगे रहते हैं।

पं० श्यामनाथ एक सीधे-सादे व्यक्ति हैं, परन्तु यह दिखाने का प्रयत्न करते हैं कि वह सीधे नहीं वरन् चालाक हैं।[1] उनके मित्र हर समय उनसे उलटी-सीधी बातें करके उन्हें बुद्धू बनाने के प्रयत्न में लगे रहते हैं। एक दिन वे पं० श्यामनाथ जी से हठ करते हैं कि वह अपनी पत्नी को उन्हें दिखाएँ। पं० श्यामनाथ जी तैयार हो जाते हैं और पत्नी को भी इसके लिए तैयार कर लेते हैं। मित्र पत्नी को देखने के लिए पहली अप्रैल का दिन रखते हैं तथा पं० श्यामनाथ को पहली अप्रैल न बताकर दिन का नाम लेकर कहते हैं कि वे वृहस्पतिवार को उनके घर आएँगे। मित्रों ने पहले तो सोचा कि वे श्यामनाथ की पत्नी के अपने समक्ष आने पर मुँह देखे बिना ही 'एप्रिल फूल' कह देंगे, परन्तु फिर सोचा कि एप्रिल फूल तो वे श्यामनाथ को हमेशा ही बनाते हैं पत्नी के दर्शन अवश्य करेंगे।

श्यामनाथ की पत्नी अत्यन्त समझदार तथा चालाक स्त्री थी। उसने पति के मित्रों का एप्रिल फूल बनाने का प्रोग्राम बनाया और उन मित्रों की पत्नियों को पहले से ही अपने घर बुला लिया जो उस दिन उनके घर आने वाले थे। जब मित्र आते हैं तो भोजन करने से पूर्व पत्नी को देखने का निश्चय होता है। जैसे ही मित्र श्याम नाथ की पत्नी के कमरे में प्रवेश करते हैं तो उनकी पत्नियाँ तो शान्त बैठी रहती हैं, श्यामनाथ की पत्नी कहती है, "एप्रिल फूल"। तीनों मित्र केवल अपनी-अपनी पत्नियों को ही पहचान पाते हैं और देखते ही कमरे से बाहर हो जाते हैं। तत्पश्चात् श्यामनाथ की पत्नी पति को इसका रहस्य बताती है कि उनके मित्रों में कोई भी चारों स्त्रियों में से न तो उसे पहचान पाया और न ही वे एक-दूसरे की पत्नियों को जानते थे, अतः केवल अपनी-अपनी पत्नियों को ही देखकर चले गये। इस प्रकार श्यामनाथ

---

१. "मैं जरा टेढ़ा आदमी हूँ, मेरे साथ जरा सँभल कर बातचीत कीजिए। समझे?"—'एप्रिल फूल' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ १५८।

लीडरी के पेशे में फँसकर पंडित उमादत्त शुक्ल अपने पारिवारिक दायित्व को भी भुला देते हैं। पिता की मृत्यु की सूचना प्राप्त होने पर वह तार देते हैं कि वह कार्याधिक्य के कारण नहीं आ सकते। एक मास पश्चात् घर पहुँचने पर माँ की फटकार सुनकर उन्हें केवल इस बात का भय होता है कि यदि मुहल्ले वालों ने सुन लिया तो उनकी लीडरी की सारी शान मिट्टी में मिल जावेगी। उनकी माँ रुष्ट होकर उनका मुँह नहीं देखना चाहती और अपने भाई के पास चली जाती हैं। उमादत्त शुक्ल को इसकी कोई चिन्ता नहीं। वह ठाठ से अपनी लीडरी के पथ पर बढ़ते रहते हैं।

इस कहानी में 'कौशिक' जी ने नेताओं के अनुत्तरदायी जीवन के खोखलेपन का व्यंग्यात्मक चित्र प्रस्तुत किया है। लीडरी के पेशे को अपनाकर पं० उमादत्त शुक्ल परिवार के प्रति अपने कर्तव्य को भूल जाते हैं। उनका उद्देश्य ऐश करते हुए अपनी नेतागिरी को चलाना मात्र रह जाता है। स्वयं को वह राष्ट्रीय उद्धार का ठेकेदार समझते हैं, परन्तु वास्तविकता यह है कि वह इस पेशे को अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए अपनाते हैं। ऐसे चरित्र समाज में एक नहीं अनेकों भरे पड़े हैं, जिनकी ओर दृष्टि डालते हुए कहानीकार ने उनके खोखले जीवन का निरीक्षण कर यह कथा-चित्र प्रस्तुत किया है। यह कहानी एक वर्ग विशेष का प्रतीक-चित्र उपस्थित करती है, जिसके चित्रण में कौशिक जी को असाधारण सफलता प्राप्त हुई है।

इक्के वाला

आत्मचरित्रात्मक शैली में रचित इस कहानी में कहानीकार ने एक इक्केवाले की ईमानदारी का चित्र प्रस्तुत किया है। साधारणतया जनता में निर्धन वर्ग बेईमान समझ लिये जाते हैं। इक्केवाले श्यामलाल को जब उसके इक्के में बैठ आने वाली सवारियाँ चार-आने के लिए बेईमान साबित करती हैं तो वह उद्विग्न उठता है। उसे उन व्यक्तियों के मिथ्या-दोषारोपण पर मार्मिक कष्ट होता है। उसके इक्के में बैठने वाली अन्य सवारियाँ जब उससे पहली सवारियों के साथ विवाद होने का कारण पूछती हैं तो वह उनका कारण बताकर आत्मकथा के रूप में अपने जीवन की एक पुरानी घटना उन्हें इस प्रकार सुनाता है कि एक बार उसने एक धनाढ्य व्यक्ति के यहाँ नौकरी की थी। उस व्यक्ति के परिवार में उसकी पहली पत्नी का पुत्र तथा दूसरी पत्नी, दो सदस्य थे। पुत्र पिता से रुष्ट होकर कहीं अन्यत्र चला गया था।

इस दुराचरण का शिकार नहीं बना। क्रुद्ध होकर पत्नी ने अपने पति से श्यामलाल की शिकायत की। मालिक (धनाढ्य व्यक्ति) के डाँटने पर श्यामलाल नौकरी छोड़ने को उद्यत हो गया, साथ ही उसने मालकिन की दुश्चरित्रता भी उस पर स्पष्ट कर दी। मालिक को उसके कथन पर विश्वास हो गया और श्यामलाल नौकरी पर बना रहा।

एक वर्ष पश्चात् मालिक के चचेरे भाई ने उनके घर पर आना-जाना प्रारम्भ कर दिया और मालिक की पत्नी से बहुत मेल-जोल बढ़ा लिया। श्यामलाल के इस बात की सूचना देने पर मालिक ने अपने भाई का घर मे प्रवेश बंद कर दिया। छः महीने पश्चात् अचानक मालिक को हैजा हो गया और बचने की आशा न रही। मृत्यु से कुछ देर पूर्व उसने अपनी कोठरी की ताली श्यामलाल को देकर कहा, "श्यामलाल! मैं तुझे नौकर नहीं पुत्र समझता हूँ। इसलिए मैं अपनी कोठरी की ताली तुझे देता हूँ। मेरे मरने पर यह ताली मेरे लड़के को देना और जब तक वह न आ जाय तब तक किसी को कोठरी न खोलने देना।"[1] उसने पाँच हजार रुपये पुरस्कार-स्वरूप श्यामलाल को दिये।

मालिक की मृत्यु के पश्चात् ताली प्राप्त करने के लिए उसकी पत्नी ने श्यामलाल को प्रलोभन दिया और पुलिस का भय दिखाया परन्तु श्यामलाल अपने सत्य से विचलित न हुआ। उसने ताली मालिक के पुत्र के आने पर उसी को दी। कोठरी का ताला खोलने पर उसमें साठ हजार रुपये निकले, जिनमें से एक हजार रुपये लड़के ने श्यामलाल को दे दिये। तत्पश्चात् श्यामलाल ने नौकरी छोड़ दी और किराये पर इक्का जोतने लगा।

अपने जीवन की पूर्व-घटना को प्रस्तुत करके श्यामलाल ने इक्के में बैठी सवारियों के समक्ष अपनी सचाई का प्रमाण प्रस्तुत किया। यदि वह बेईमान होता तो मालिक के साठ हजार रुपये हड़प सकता था। इस कहानी में एक निर्धन व्यक्ति की ईमानदारी का स्वर मुखरित हुआ है। 'कौशिक' जी की आत्मचरित्रात्मक कहानियों में यह कहानी अपना विशिष्ट स्थान रखती है। कथा का आरम्भ बहुत कलात्मक ढंग से किया गया है।

मकान खाली है

प्रस्तुत कहानी की रचना पूर्णतया नाटकीय शैली में हुई है। आदि से अन्त

वर्णनात्मक या अन्य शैलियों का प्रयोग नहीं हुआ है। कहानी के
क की भांति पात्रों का परिचय दिया गया है[1] तथा सम्पूर्ण कथा वार्ता
वार्तालाप से ही अग्रसर होती है। वार्तालाप के मध्य में नाटक की
त्मक संकेत भी दिये गये हैं, जिन्होंने कहानी में पर्याप्त नाटकीय

मनाथ—(कलम गिरने की आवाज़ सुनकर) क्या गिरा ?
ता—मैंने तो देखा नहीं।
मनाथ—कलम गिर गया। (उठ कर खड़ा हो जाता है) किधर गया!
लम पैर के नीचे दब कर कुचल जाता है) ओफ कलम तो गया। इत
। तुम बैठी तमाशा देख रही हो।"[2]

कहानी की कथा मकान को किराये पर उठाने की एक सामाजिक समस्या
रित है। रामनाथ का एक मकान खाली पड़ा है जिसमें कोई व्यक्ति नहीं
उनकी पत्नी शान्ता उस मकान को किराये पर उठाने का परामर्श देती है
ससे २० रुपये मासिक किराया प्राप्त हो सके। रामनाथ को समझ नहीं आता
रायेदार लाने की समस्या को कैसे हल करें। उनके नौकर बदलू से ए
दार ने आने का वायदा किया हुआ था, परन्तु वह नहीं आया। तत्पश्चा
ने खाली मकान पर एक तख्ती लिखकर टांगने की सलाह दी, ताकि सब
चल जाये कि मकान खाली है।

रामनाथ बदलू से कागज़, कलम आदि मंगवाकर उसकी सलाह से कागज़
जी, हिन्दी तथा उर्दू तीनों भाषाओं में लिखने के लिए बैठते हैं। जैसे ही उ
जी में छोटा-छोटा 'टू लेट' लिख कर दिखाया तो शान्ता ने कहा—"भला
ीक हरूफ पढ़ कौन सकेगा ?"[3] अब बदलू ने मुन्शी जी से दावात और
लम लाकर दिया, जिससे रामनाथ ने कागज़ पर अंग्रेजी में 'टू लेट' तथा
"मकान खाली है" लिख दिया। इस पर शान्ता तथा बदलू ने विरोध क
हा कि मकान अन्य कारणों—भूत-प्रेत आदि का निवास होने पर भी ख
होते हैं, अतः केवल 'मकान खाली है' लिखना उचित नहीं।

रामनाथ ने फिर नया कागज लेकर उस पर उक्त तीनों भाषाओं में 'मकान किराये के लिए खाली है' लिख दिया तो शान्ता और बदलू ने फिर आक्षेप किया कि मकान किराये पर लेने वाला व्यक्ति किससे बात करेगा? अतः अपना पता लिखना भी आवश्यक है। तब रामनाथ इस कार्य को पूर्ण करने की हठ पकड़कर एक दस्ता कागज और मंगवाते हैं। इतने में ही कलम पैर के नीचे आकर टूट जाता है। बदलू से फिर दो नए कलम मंगवाए जाते हैं, एक मुन्शी जी को वापिस करने के लिए, दूसरा अपने लिए। रामनाथ कलम बनाना प्रारम्भ करते हैं तो चाकू से उनकी ऊँगली कट जाती है। तत्पश्चात् बदलू मुन्शी जी की बनाई हुई कलम ले आता है और अपनी कलम उन्हें दे आता है। अब रामनाथ ने कागज पर "टु लेट' मकान किराये के लिए खाली है—बगल के मकान में बाबू रामनाथ से तय कीजिए।"[1] लिखकर तख्ती पर चिपका दिया। फिर उस तख्ती को मकान पर टाँगने के लिए उसमें छिद्र करने की समस्या उत्पन्न हुई। रामनाथ जैसे ही कील तथा हथौड़ा लेकर सूराख करने लगे तो तख्ती फट गई। उस पर उनकी पत्नी तथा बदलू से बहस होती है। इतने में ही रामनाथ जी के मित्र श्यामनाथ आकर उनकी उँगली में चोट आने का कारण पूछते हैं यथा सारी बात जानकर सलाह देते हैं कि या तो पेण्टर से लोहे की तख्ती पर लिखवा लें या केवल काम चलाने से लिए कागज पर लिख कर मकान के किवाड़ पर चिपका दें। किरायेदार के आने पर कागज फाड़ दिया जाये। अन्त मे इस अन्तिम उपाय का प्रयोग करने का ही निश्चय होता है और कहानी समाप्त हो जाती है।

इस कहानी का विषय हास्यात्मक है। छोटे-छोटे संवादों के सुन्दर प्रयोगो द्वारा कहानीकार ने बीच-बीच मे पति-पत्नी की आपसी बहस का चित्रण करते हुए पारिवारिक जीवन की एक यथार्थ झाँकी प्रस्तुत की है, जिसने कहानी को अत्यन्त मनोरंजक बना दिया है।

पथ-निर्देश

मिश्रित शैली मे रचित इस कहानी में 'कौशिक' जी ने धन-लिप्सा पर कटु व्यंग्य किया है। विश्वेश्वरनाथ ऐसे चरित्र का प्रतीक है जो धन लोलुपता में फँसकर अपनी प्रतिष्ठा तथा सम्मान का । परिणामस्वरूप

नहीं भी वर्णनात्मक या अन्य शैलियों का प्रयोग नहीं हुआ है। कहानी के प्रारम्भ में नाटक की भांति पात्रों का परिचय दिया गया है[1] तथा सम्पूर्ण कथा पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप से ही अग्रसर होती है। वार्तालाप के मध्य में नाटक की भांति अभिनयात्मक संकेत भी दिये गये हैं, जिन्होंने कहानी में पर्याप्त नाटकीयता ला दी है।

"रामनाथ—(कलम गिरने की आवाज सुनकर) क्या गिरा ?

शान्ता—मैंने तो देखा नहीं।

रामनाथ—कलम गिर गया। (उठ कर खड़ा हो जाता है) किधर गया ! अरे ! (कलम पैर के नीचे दब कर कुचल जाता है) ओफ कलम तो गया। बड़ी मुसीबत है। तुम बैठी तमाशा देख रही हो।"[2]

कहानी की कथा मकान को किराये पर उठाने की एक सामाजिक समस्या पर आधारित है। रामनाथ का एक मकान खाली पड़ा है जिसमें कोई व्यक्ति नहीं रहता। उनकी पत्नी शान्ता उस मकान को किराये पर उठाने का परामर्श देती है ताकि उससे २० रुपये मासिक किराया प्राप्त हो सके। रामनाथ को समझ नहीं आता कि किरायेदार लाने की समस्या को कैसे हल करें। उनके नौकर बदलू से एक किरायेदार ने आने का वायदा किया हुआ था, परन्तु वह नहीं आया। तत्पश्चात बदलू ने खाली मकान पर एक तख्ती लिखकर टांगने की सलाह दी, ताकि सब को पता चल जाये कि मकान खाली है।

रामनाथ बदलू से कागज, कलम आदि मँगवाकर उसकी सलाह से कागज पर अंग्रेजी, हिन्दी तथा उर्दू तीनों भाषाओं में लिखने के लिए बैठते हैं। जैसे ही उन्होंने अंग्रेजी में छोटा-छोटा 'टू लेट' लिख कर दिखाया तो शान्ता ने कहा—"भला अंग्रेजी के बारीक हरुफ पढ़ कौन सकेगा ?"[3] अब बदलू ने मुन्शी जी से दावात और क़लम लाकर दिया, जिससे रामनाथ ने कागज पर अंग्रेजी में 'टू लेट' तथा हिन्दी में "मकान खाली है" लिख दिया। इस पर शान्ता तथा बदलू ने विरोध कर कहा कि मकान अन्य कारणों—भूत-प्रेत आदि का निवास होने पर भी खाली रहते हैं, अतः केवल 'मकान खाली है' लिखना उचित नहीं।

...[कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० १८७।

रामनाथ ने फिर नया कागज लेकर उस पर उक्त तीनों भाषाओं में 'मकान किराये के लिए खाली है' लिख दिया तो शान्ता और बदलू ने फिर आक्षेप किया कि मकान किराये पर लेने वाला व्यक्ति किससे बात करेगा ? अतः अपना पता लिखना भी आवश्यक है। तब रामनाथ इस कार्य को पूर्ण करने की हठ पकड़ कर एक दस्ता कागज और मँगवाते हैं। इतने मे ही कलम पैर के नीचे आकर टूट जाता है। बदलू से फिर दो नए कलम मँगवाए जाते हैं, एक मुन्शी जी को वापिस करने के लिए, दूसरा अपने लिए। रामनाथ कलम बनाना प्रारम्भ करते हैं तो चाकू से उनकी ऊँगली कट जाती है। तत्पश्चात् बदलू मुन्शी जी को बनाई हुई कलम ले आता है और अपनी कलम उन्हें दे आता है। अब रामनाथ ने कागज पर "टु लेट' मकान किराये के लिए खाली है—बगल के मकान मे बाबू रामनाथ से तय कीजिए।"[1] लिखकर तख्ती पर चिपका दिया। फिर उस तख्ती को मकान पर टाँगने के लिए उसमें छिद्र करने की समस्या उत्पन्न हुई। रामनाथ जैसे ही कील तथा हथौड़ा लेकर सूराख करने लगे तो तख्ती फट गई। उस पर उनकी पत्नी तथा बदलू से बहस होती है। इतने मे ही रामनाथ जी के मित्र श्यामनाथ आकर उनकी उँगली मे चोट आने का कारण पूछते हैं यथा सारी बात जानकर सलाह देते हैं कि या तो पेण्टर से लोहे की तख्ती पर लिखवा लें या केवल काम चलाने से लिए कागज पर लिख कर मकान के किवाड़ पर चिपका दें। किरायेदार के आने पर कागज फाड़ दिया जाये। अन्त मे इस अन्तिम उपाय का प्रयोग करने का ही निश्चय होता है और कहानी समाप्त हो जाती है।

इस कहानी का विषय हास्यात्मक है। छोटे-छोटे संवादो के सुन्दर प्रयोगो द्वारा कहानीकार ने बीच-बीच मे पति-पत्नी की आपसी बहस का चित्रण करते हुए पारिवारिक जीवन की एक यथार्थ झाँकी प्रस्तुत की है, जिसने कहानी को अत्यन्त मनोरंजक बना दिया है।

पथ-निर्देश

मिश्रित शैली मे रचित इस कहानी में 'कौशिक' जी ने धन-लिप्सा पर कटु व्यंग्य किया है। विश्वेश्वरनाथ ऐसे चरित्र का प्रतीक है जो धन लोलुपता में फँसकर अपनी प्रतिष्ठा तथा सम्मान का भी ध्यान नहीं रखता। परिणामस्वरूप

मित्रता थी, इस कारण उन्होंने हस्ताक्षर किये थे। दीवान जी को सजा हो गई। अन्त में छूटने पर विश्वेश्वरनाथ ने घनश्यामदास के समक्ष स्वीकार किया, "इस रुपये रूपी राक्षस ने आँखों पर पट्टी बाँध दी।"[1] और फिर कभी धन के लोभ में न पड़ने की कसम खाई। वह समझ गया कि आराम से रोटी-कपड़ा मिल जाय, यही बहुत है। "संसार में यह बात बड़े भाग्यवान हो को नसीब होती है।"[2] अत्यधिक धन की महत्त्वाकांक्षा के दुष्परिणाम ने उसका पथ-निर्देश कर उसे उचित मार्ग पर ला दिया।

उक्त विवेचन से ज्ञात होता है कि 'कौशिक' जी के कथा-साहित्य की मूल संवेदना एवं भावना समाज से ग्रहण की गई है। समाज मानव-जीवन की अखण्ड इकाई है। मूलतः मनुष्य का जीवन समाज की दीवारों में बंदी है। ऊर्ध्वतम भूमि पर राजनीति, इतिहास अथवा अन्य सभी वर्ग समाज के अन्तर्गत ही विलीन हो जाते हैं। 'कौशिक' जी अपने युग के समाज से पूर्णतया प्रभावित रहे और उसकी अभिव्यक्ति में इन्हें अपूर्व सफलता प्राप्त हुई। सामाजिक पात्रों के जीवन को कथासूत्र में बाँधते हुए इन्होंने उनकी चारित्रिक विशेषताओं का जो उद्घाटन किया है, वह हिन्दी-साहित्य में विशेष महत्त्व रखता है।

---

१ 'पथ-निर्देश' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ ३१।
२ ,, ,, ,, ,, ३२।

विषय, मूल समस्या, उद्देश्य अथवा किसी पात्र-विशेष पर रहती है, जिसके चारों ओर सम्पूर्ण कथा-चक्र घूमता है। इसलिए लेखक कहानी का शीर्षक उक्त चारों में से किसी एक के आधार पर निश्चित करता है। शीर्षक तथा कहानी का अन्योन्य सम्बन्ध होना चाहिये।[1] शीर्षक से किसी-न-किसी प्रकार कहानी के तथ्य का बोध होना चाहिये तथा शीर्षक के अनुसार कथावस्तु का प्रसार होना चाहिये।

'कौशिक' जी की कहानियों के शीर्षक संक्षिप्त, आकर्षक तथा कथाभाग से सामञ्जस्य रखने वाले हैं। शीर्षक-चयन करते समय कहानीकार की दृष्टि विशेष रूप से कहानी की प्रमुख घटना, पात्र तथा प्रतिपाद्य-विषय आदि पर रही है, जिनके आधार पर इन्होंने अपनी कहानियों के विभिन्न प्रकार के शीर्षक निर्धारित किये हैं।

(क) प्रमुख घटना पर आधारित शीर्षक :—'मुन्शी जी का ब्याह', रक्षा-बन्धन', 'रेल-यात्रा', 'मुन्शी जी की दीवाली', 'पूजा का रुपया', 'लाला की होली', 'साध की होली', 'दाँत का दर्द', 'न्याय', दशहरे का मेला', 'ताश का खेल', 'जागरण' तथा 'विधवा की होली' आदि शीर्षक कहानियों की प्रमुख घटनाओं की ओर संकेत करने वाले हैं। उदाहरणस्वरूप 'साध की होली' कहानी में रामसिंह जमींदार सज्जादहुसैन का खून कर अपनी भाभी के अपमान का प्रतिशोध लेता है तथा उसके खून से भाभी के साथ होली खेलने की अपनी साध को पूर्ण करता है। कहानी मे यही प्रमुख घटना है, जिसके आधार पर इसका नामकरण किया गया है।

(ख) प्रमुख पात्र के चरित्र को दृष्टि में रखकर निर्धारित किये गये शीर्षक:— 'कौशिक' जी ने चरित्र-चित्रण-प्रधान कहानियों के शीर्षक अधिकांशतः प्रमुख पात्रों के आधार पर ही रख दिये हैं, जैसे—'पेरिस की नर्तकी', 'नरपशु', 'नास्तिक प्रोफेसर', 'इक्केवाला', 'कुपात्र', 'प्रेम का पापी', 'पत्रकार', 'विधवा' तथा 'अपराधी' आदि। कुछ कहानियो के शीर्षक प्रमुख पात्रों के नाम पर ही रख दिये गए हैं, जैसे—'खिलावन काका', 'ननकू चौधरी', 'महाराज-पैलेस', तथा 'राजा निरंजन' आदि। इस प्रकार के शीर्षक साधारण कोटि के हैं। कुछ कहानियों के शीर्षक

---

१. 'कहानी का रचना-विधान'—डॉ० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा, पृ० १४६।

२. "Keep the title in its proper proportion to the nature and interest of the story."—Maconochie, D.: The craft of the short story. (1936), pp. 25.

ारिवारिक सम्बन्धों का निर्देश करने वाले हैं, जैसे—'ताई', 'छोटा बेटा' आदि। ाई' कहानी में ताई रामेश्वरी का चरित्र ही प्रमुख है। सम्पूर्ण कहानी का कथानक सी एक पात्र के इर्द-गिर्द घूमता है। कहानी की मूल समस्या तथा विषय का ाधार यही है। अतः एक आदर्श ताई के चरित्र का निर्माण करते हुए 'कौशिक' ने इसका शीर्षक निर्धारित किया है।

प्रतिपाद्य-विषय, भाव तथा उद्देश्य से सम्बन्धित शीर्षक :—'कौशिक' जी अधिकांश कहानियों के शीर्षक उनमें प्रतिपादित विषय, भाव तथा उद्देश्य का र्देश करने वाले हैं। 'पाँच सौ एक रुपये', 'परीक्षा', 'वात', 'लगन', 'राजपथ', ोकापवाद', 'लनतरानी', 'प्रेत', 'वंचना', 'पैसा', 'मातृभक्ति', 'प्रमेला', 'विजय', क्त की टेर', 'भगवान की कृतघ्नता', 'बुद्धि-बल', 'बड़ा दिन', 'बदला', 'परिणाम', थनिर्देश', 'भाग्य-चक्र', 'प्रकृति', 'पुराना खिलाड़', 'भगवान् की इच्छा', 'विश्वास', ार', 'पाप का बल', 'निर्बल की विजय', 'मालती का प्रेम', 'माता का हृदय' 'स्वतन्त्रता' आदि शीर्षक इसी कोटि के अन्तर्गत आते हैं। 'पथ-निर्देश' कहानी एक महत्वाकांक्षी युवक, जिसकी अर्थ-लिप्सा-बढ़ते-बढ़ते इस सीमा तक पहुँच ी है कि वह अनुचित कार्य करने के लिए तैयार हो जाता है, के अनुचित कर्म दुष्परिणाम तथा प्रायश्चित द्वारा उसका पथ-निर्देश करना लेखक को अभीष्ट इसी विषय के आधार पर इसका शीर्षक (पथ-निर्देश) रखा गया है। 'सुधार' नी मे लेखक का उद्देश्य यह निर्दिष्ट करना रहा है कि बुरे व्यक्तियों का सुधार प्रकार करना चाहिये। 'सुधार' शीर्षक इसी उद्देश्य का निर्देश करने वाला है। प्रकार उक्त सभी कहानियों के शीर्षक कहानी के विषय, भाव तथा उद्देश्य को करने वाले हैं।

उक्त सभी प्रकार के शीर्षक सामान्य कोटि के हैं, विशेष प्रभावोत्पादक । इनके अतिरिक्त कुछ कहानियों के शीर्षक अत्यन्त आकर्षक, रहस्यपूर्ण, समाज ्यंग्य करने वाले तथा मानव-हृदय की भावनाओं से सम्बन्धित हैं, जो पाठकों जिज्ञासा की वृद्धि करने की दृष्टि से बहुत उपयुक्त हैं। समाज पर व्यंग्य करने 'गँवार', 'धुन', 'नियति', 'शहर की हवा', 'सयाना कौआ' तथा ...व-हृदय की सूक्ष्म भावनाओं का उद्घाटन करने वाले शीर्षक ...', 'भ्रम', 'मद', 'शान्ति', 'आत्मोत्सर्ग', 'आत्मग्लानि' तथा

...' जी ने अनेक कहानियों के शीर्षक विरोधी भावनाओं के आधार हैं, जो अत्यन्त आकर्षक बन गए हैं, जैसे :—'मनुष्यता का दण्ड' तथा

'दरिद्रता का पुरस्कार' आदि। प्रेमचन्द की कहानियों के 'सज्जनता का दण्ड', 'खून सफेद' आदि शीर्षक भी इसी प्रकार विरोधी बातों को प्रकट करने वाले हैं। वस्तुतः शीर्षकों के निर्वाचन में 'कौशिक' जी को अद्भुत सफलता प्राप्त हुई है। इनकी कहानियों के शीर्षक मुख्यतः एक-दो-तीन या चार शब्दों तक के हैं तथा विषयवस्तु से पूर्णतया संबद्ध हैं। डॉ० अष्टभुजाप्रसाद पाण्डेय के शब्दों में—"कौशिक जी की कहानियो के शीर्षक अधिकांश समग्र कहानी के कथासूत्र, प्रभावान्विति ऐक्य तथा चेतना का स्पर्श करते हैं।"[1]

कथावस्तु

सुनिश्चित योजना के अनुसार प्रस्तुत किया गया मूल-भाव के पूर्व तथा पश्चात् का विवरण कहानी की कथावस्तु या कथानक कहलाता है। इसके अन्तर्गत केवल आरम्भ, चरमोत्कर्ष और अन्त को प्रभावशाली बनाना होता है। कहानी की कथा-वस्तु संक्षिप्त[2] तथा सरल होनी चाहिये। जटिल कथावस्तु से चरित्र दब जाते हैं। रोचकता, संक्षिप्तता, संभाव्यता तथा सरलता आदि इसके प्रमुख गुण होते हैं। 'कौशिक' जी ने कथानक का संगठन बहुत सुन्दर ढंग से किया है। इनके कथानक न तो जटिल हैं और न ही अधिक विस्तृत, एक पूर्व-निश्चित योजना के आधार पर धीरे-धीरे विकसित होते हैं। इनमें कहानी के विषय का क्रम-विन्यास स्पष्ट रूप से निहित रहता है। कुछ विद्वानों के मतानुसार कहानी बिना योजना बनाए भी लिखी जा सकती है[3]। कार्य, कारण और परिणाम सभी को दिखाना वे आवश्यक नहीं समझते, केवल साध्य की सिद्धावस्था को ही सामने लाकर ऐसा प्रभावोत्पादक दृश्य उपस्थित करना चाहते हैं कि पाठक द्रवित हो उठे। यह विचार युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होता। कोई भी निर्माण-कार्य पूर्व-योजना के बिना सम्पन्न नहीं हो सकता।[4]

---

१. 'हिन्दी-कहानी शिल्प-इतिहास-आलोचना'—पृ० १२८।

२ "कहानी की कथावस्तु अत्यन्त संक्षिप्त होती है। उसमें शहर के रहने वाले अल्पसंख्यक परिवार के घर की भाँति अभ्यागत मेहमानों के लिए समाई नहीं।"—'काव्य के रूप'—गुलाबराय, पृष्ठ १६८।

3 "With or without your kind permission I will kick the word 'plot' right into the sea, hoping that it will sink and never reappear.
—Francis Vivian 'Creative Technique in Fiction'. (1946), P P. 423.

४ 'कहानी का रचना-विधान'-डॉ० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा पृष्ठ ४२।

प्रारम्भ—कहानी के आदि और अन्त का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध रहता है। लेखक को अन्त में जो कहना होता है उसकी भूमिका वह प्रारम्भ में ही प्रस्तुत क देता है। कहानी के प्रारम्भ-स्थल को सर्वाधिक कौशल के साथ प्रस्तुत किया जा है, जिससे पाठक रचना की ओर आकृष्ट हो सके। इस भाग का विकास कुतूह और जिज्ञासा को जागृत करने वाला होना चाहिए। प्रसाद ने अपनी कहानियों क प्रारम्भ इसीलिए नाटकीय ढंग से किया है। "उत्तम कोटि की कहानियों क 'प्रारम्भ' आकर्षक और अन्त प्रभावपूर्ण होता है।"[1]

'कौशिक' जी ने कहानियों का प्रारम्भ प्रमुखतः दो प्रकार से किया है। ए इतिवृत्तात्मक ढंग से पात्रों का परिचय देते हुए या किसी पात्र की चरित्रग विशेषताओं का वर्णन करते हुए, दूसरे पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप द्वारा नाटीक ढंग से।

(क) इतिवृत्तात्मक प्रारम्भ:—'प्रायश्चित', 'संतोष-धन', 'नरपशु', कर्तव्य परायण,' 'विधवा', 'माता की सीख', 'पूजा का रुपया', 'भक्त' तथा 'खिलावन काका' आदि कहानियों का प्रारम्भ कथात्मक ढंग से हुआ है, जो साधारण कोटि क है, जैसे :—

"बाबू इन्द्रजीतसिंह और मुझमें बड़ी गहरी मित्रता थी। हम दोनों एक ही जाति, एक ही उम्र तथा एक ही विचार के आदमी थे। बाबू इन्द्रजीतसिंह मेरे घर से थोड़ी ही दूर पर रहते थे। अतएव समय मिलने पर कभी मैं उनके घर चला जाता और कभी वह मेरे घर आ जाते थे। बाबू इन्द्रजीतसिंह एक हिंदोस्तानी फ़र्म (व्यवसाय) में हेडक्लर्क अर्थात् बड़े बाबू थे; मासिक वेतन १५० रु० मिलता था।"[2]
—(विधवा)

(ख) प्रमुख पात्र के चरित्र का वर्णन करते हुए प्रारम्भ :—'लीडरी का पेशा' 'सुधार', 'साध की होली', 'ईश्वर का डर', 'दाँत का दर्द', तथा 'पैसा' आदि कहानियों का प्रारम्भ इसी प्रकार से किया गया है। उदाहरण के लिए 'सुधार' कहानी का प्रारम्भ देखिये :—

"बाबू शिवकुमार बड़े देश-भक्त थे। उनमें देशभक्ति की मात्रा उस सीमा तक पहुँची हुई थी, जिसे कुछ लोग अनधिकार चेष्टा कहते हैं। उनका एक कार्य यह था कि वह प्रायः इस खोज में घूमा करते थे कि उनके भोले-भाले और निस्सहाय

---

[1] 'हिंदी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन'—डॉ० ब्रह्मदत्त शर्मा, पृ० ४८।
[2] चित्रशाला' [कहानी-संग्रह]—पृ० १२८।

भाइयों पर सरकारी कर्मचारी अत्याचार तो नहीं करते। यदि उन्हें कोई ऐसा मामला मिल जाता, तो वह कर्मचारियों को क़ानूनी शिकंजे में लेकर उन्हे पूरा दण्ड दिलाने की चेष्टा किया करते थे। उन्हें कभी-कभी इस कार्य में सफलता भी मिलती थी।"[1] (सुधार)

नाटकीय आरम्भ:— 'रक्षा बन्धन', 'ताई', मालती का प्रेम', 'बन्ध्या', 'विजय', 'उद्धार', 'आज़ादी' तथा 'प्रभाव' आदि कहानियों का आरम्भ 'कौशिक' जी ने आकस्मिक रूप से पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप के द्वारा किया है, जो बहुत आकर्षक बन पड़ा है, जैसे निम्न दो उदाहरण देखिये:—

(क) "नहीं, नहीं यदि तू मुझे सुखी करना चाहता है, तो तुझे ऐसा अवश्य करना पड़ेगा।"

(चकित होकर) "ऐं, यह तुम क्या कहती हो? क्या तुम्हारा सुख इसी मे है?"[2]—(बन्ध्या)

(ख) "तुम इसे क्या समझते हो—यह बड़ी मालदार है।"

"एँ! मालदार है? अजी बस रहने दो। मालदारी तो इसकी सूरत से टपकती है।"

"सूरत पर मत जाओ। किसी की असली हालत का पता उसकी सूरत से नहीं लग सकता।"[3]—(प्रभाव)

पाठकों की कौतूहल-वृत्ति को जागृत करने में उक्त प्रकार के आरम्भ अत्यधिक सशक्त, समर्थ तथा आकर्षक सिद्ध होते हैं। इस रीति से कहानियों का आरम्भ करने में 'कौशिक' जी को अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई है। कुछ लेखक कथा के आरम्भ में कलात्मक चित्र प्रस्तुत कर पाठक को आकर्षित करते हैं। प्रसाद ने 'अपराधी' तथा, 'स्वर्ग के खण्डहर में' आदि अनेक कहानियों का आरम्भ इसी प्रकार किया है। 'कौशिक' जी ने कुछ कहानियों में किसी पात्र की एक उक्ति देते हुए सांसारिक परिस्थिति आदि के चित्रण से भी कहानियों का आरम्भ किया है, यथा:—

"बेटी सुशीला, अब रहने दो। बारह तो बज गए, सवेरे देखा जायगा। आज दिनभर और इतनी रात काम करते ही बीती।"

---

१ 'पथ-निर्देश' [कहानी-संग्रह]—पृष्ठ ५४।
२ 'बन्ध्या' ,, पृष्ठ ४५।
३ 'पमिल फूल' ,, पृष्ठ १४४।

रात के बारह बज चुके हैं। संसार का अधिकांश भाग निद्रा की गो खर्राटे ले रहा है। जाग केवल वे लोग रहे हैं, जिन्हें जागने में सोने की अपेक्षा वि आनंद और सुख मिलता है, अथवा वे लोग, जो दिन को रात तथा रात को समझते हैं और या फिर वे लोग, जो रात के अंधकार और लोगों की निद्रावस्था अनुचित लाभ उठाने को उत्सुक रहते हैं। परंतु इनके अतिरिक्त कुछ और प्रकार लोग भी जाग रहे हैं।...जिनके उदर-पोषण के लिए दिन के बारह घंटे यथेष्ट न जिनके लिये सोने और आराम करने का अर्थ दूसरे दिन फ़ाका करना है, जो नि देवी के प्रेमालिंगन का तिरस्कार केवल इसलिये कर रहे हैं कि उसके बदले में दू दिन उन्हें क्षुधा-राक्षसी की मार सहनी पड़ेगी।"[1]—(उद्धार)

मध्यभाग और चरमसीमा—कहानी का मध्यभाग उसके आदि और को संतुलन प्रदान करता है। आरम्भ से चलकर कहानी का मूल विषय—चरि घटना अथवा भाव एक क्रम से एकनिष्ठ होकर आगे बढ़ता है, उसकी गति की तीव्र के साथ-साथ प्रभाव भी सिमिट कर घनीभूत हो जाता है। "इस विस्तार-क्रम जिस समय कथानक तीव्रतम गति से पर्यवसान की ओर मोड़ लेता है, उसी कहानी का मध्यबिंदु समझना चाहिए।"[2] कहानी के मध्यबिंदु या चरमोत्कर्ष-स्थ पर पहुँचकर पाठक का मन जिज्ञासा, कुतूहल और ऊहापोह के धरातल पर उत आता है तथा उसकी कल्पना अनुमान के बल पर विविध दिशाओं में उड़ानें भर लगती है। इसी स्थल पर लेखक कथा के मूल भाव का संकेत प्रस्तुत करता है।

'कौशिक' जी की कहानियों में मध्यभाग का विकास बहुत सुन्दर ढंग से हुआ है तथा चरमोत्कर्ष-स्थल का सौंदर्य अद्वितीय है। निरन्तर विकसित होती हुई कथा मे किसी आकस्मिक घटना या दुर्घटना के द्वारा एक प्रकार का मोड़ आ जाता है। जिससे किसी पात्र के चरित्र मे आकस्मिक परिवर्तन उपस्थित हो जाता है, 'कौशिक' जी ने इसी रीति से अपनी अधिकांश कहानियों में चरमबिंदु की स्थापना की है। उदा- हरणस्वरूप 'ताई' कहानी मे चरमोत्कर्ष उस स्थल पर आता है, जहाँ मनोहर ताई से पतंग मँगवाने की याचना करता है तथा ताई के मौन रह जाने पर कह उठता है, "तुम हमें पतंग नहीं मँगवा दोगी तो, ताऊजी से कहकर तुम्हें पिटवावेंगे।"[3] ताई

1. 'चित्रशाला' [प्र० सं०]—पृ० २३।
2. 'कहानी का रचना-विधान'—डॉ० जगन्नाथप्रसाद शर्मा, पृ० ७७।
3. 'चित्रशाला' [प्र०सं०]—पृ० ५१।

के हृदय में विद्वेष और क्रोध की ज्वाला धधक उठती है, ममत्व तथा प्रेम की भावनाएँ अन्तस्तल में दब जाती हैं और ईर्ष्या की भावना पूर्ण रूप से प्रज्ज्वलित हो उठती है। मनोहर के कटी हुई पतंग के लिए दौड़ने तथा छज्जे से गिरते समय रक्षा के लिए पुकारने पर भी ताई जाने में विलम्ब कर देती है। मनोहर गिर जाता है और ताई भी अचेत हो जाती हैं। यहीं कथा मोड़ लेती है और ताई के हृदय में बच्चों के प्रति विद्वेष की भावना नष्ट होकर प्रेम तथा ममत्व की भावना स्थापित हो जाती है। उसका चरित्र एक आदर्श चरित्र के रूप में प्रतिष्ठित हो जाता है।

अन्त—

कहानी का अन्त सम्पूर्ण कहानी के सौंदर्य को समेटकर अपने अन्तर में छिपाए रहता है जिसे पढ़कर पाठक सम्पूर्ण कहानी की गतिविधि को समझ सकता है। कहानी के इस अंश में कथा, भाव और चरित्र पूर्णता को प्राप्त होते हैं तथा लेखक की योजना का अन्तिम रहस्य इसी स्थल पर आकर खुलता है। अतः कहानी का अन्त 'लघुप्रसारगामी' और सरल होना चाहिए, यदि नाटकीय ढंग से कथा का अन्त हो तो सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। प्रसाद की 'नीरा' कहानी का अन्त इसी प्रकार हुआ है।

'कौशिक' जी ने अधिकांश कहानियों का अन्त इतिवृत्तात्मक ढंग से किया है। कथानक को चरमसीमा तक पहुँचाकर कहानीकार ने अन्त में उपदेशात्मक वाक्य तथा परिस्थिति आदि का वर्णन कर दिया जिससे कहानियों की प्रभावोत्पादकता कम हो गई है। परन्तु ऐसा सभी कहानियों में नहीं हुआ है। कुछ कहानियों—'जाल' 'अहिंसा', 'जीत में हार', 'साध की होली', 'एप्रिल फूल', 'मनुष्यता का दण्ड', 'स्वाभिमानी नमकहलाल', 'माल्ती का प्रेम', 'जलन', 'लोकापवाद', 'होली', 'यौवन की आंधी' तथा 'पूजा का रुपया' आदि का अन्त 'कौशिक' जी ने नाटकीय ढंग से किया है, जो निश्चय ही बहुत रोचक, आकर्षक, सुन्दर तथा प्रभावपूर्ण बन पड़ा है। उदाहरण के लिए 'साध की होली' शीर्षक कहानी का अन्त देखिये :—

"भौजी ने एक बार आँख खोलकर कहा—देवर, जाओ, यह मेरी इस जन्म की अन्तिम होली है।

रामसिंह—तो क्या अब होली नहीं खेलोगी, भौजी ?

भौजी—खेलूँगी।

रामसिंह—किससे ?

भौजी—तुमसे।

रामसिंह—मुझसे ?

भौजी—हाँ, तुमसे।

रामसिंह—कहाँ ?

भौजी—स्वर्ग में ।

रामसिंह—तब मैं वहाँ शीघ्र पहुँचता हूँ, भौजी !

भौजी—जाओ देवर, तुमसे पहले मैं पहुँचूँगी ।"[1]

उक्त रीति से कहानी का अन्त करते हुए कहानीकार ने कहानी के अन्तिम रहस्य—खून के बदले रामसिंह को फाँसी की सजा तथा देवर के वियोग में भौजी का शीघ्र ही स्वर्गवास होने की संभावना—को वर्णन द्वारा उद्घाटित न करके संकेत रूप में पाठकों के समझने के लिए छोड़ दिया है । इस प्रकार का अन्त अपने प्रभाव से पाठक के चित्त को क्षण-भर के लिए झकझोर देता है ।

कुछ कहानियों में 'कौशिक' जी ने अंत में शीर्षक से सम्बन्धित वाक्य रख दिये हैं, जो शीर्षक को अधिक सशक्त तथा स्पष्ट कर देते हैं । 'ईश्वर का डर', 'सच्चा कवि', कर्त्तव्य पालन', 'भ्रम', समय की बात', 'भोला शिकार', 'प्रेम का पापी', 'पत्रकार', 'एप्रिल फूल' तथा 'लीडरी का पेशा' आदि कहानियों का अंत इसी रीति से हुआ है, जैसे—

(क) "उसकी उस सच्चाई का कारण केवल ईश्वर का डर था ।"[2]

(ख) "मेरे हृदय में यह भ्रम घुसा हुआ था कि स्थूल सुन्दरता ही मनुष्य का हृदय खींच सकती है ।"[3]

(ग) "अरे ! मैं इसे भोला शिकार समझता था ।"[4]

(घ) "प्रेम का पापी" शरीर-बंधन से मुक्त होकर परम-धाम को सिधार गया ।"[5]

(ङ) 'मैं हूँ एक पत्रकार ! और पत्रकार को बहुधा हृदयहीन बनना ही पड़ता है ।"[6]

---

१. 'साध की होली' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ १२ ।

२. " " " " १४२ ।

३. 'कल्पा' " " " ६१ ।

४. 'अंत में हार' " " " २०१ ।

५. 'पथ-निदर्श' " " " ६२ ।

'रक्षा-बंधन' " " " १६ ।

वस्तुतः कथाविन्यास के क्षेत्र में 'कौशिक' जी को अत्यधिक सफलता प्राप्त हुई है। इनके कथानक विभिन्न घटनाओं में घूमते हुए मूल केन्द्र-बिन्दु तक पहुँच जाते हैं। कथानकों में दैवी घटनाओं तथा संयोगों के प्रयोग ने कहीं-कहीं अस्वाभाविकता ला दी है। साधारणतया कथानक मन्द गति से चलते हैं, जो कि स्वाभाविक, रमणीय तथा सरल है। श्री राजनाथ शर्मा के शब्दों में—"उसमें न मनोविज्ञान की उलझनें और पेचीदगियाँ रहती हैं और न नवीन शिल्प का कोई मोह हो। सारा कथानक एक पूर्व निश्चित बंधी-बंधाई लीक पर सहज गति से चलता जाता है। उसमें अपना एक विशेष चमत्कार रहता है।"[1] कहानी के अंत में कहीं-कहीं इस प्रकार के वाक्य—"यह सन्यासी कौन था? वही हमारा पूर्व-परिचित अयोध्या प्रसाद!"[2] देने से ऐसा प्रतीत होता है मानो कहानीकार प्रत्येक तथ्य को स्वयं ही स्पष्ट करके पाठक के समझने के लिए कुछ भी नहीं छोड़ना चाहता। इस प्रकार के परिचयात्मक तथा अन्य उपदेशात्मक वर्णनों के कारण 'कौशिक' जी की कुछ कहानियों का अन्त साधारण ढंग से हुआ है, जो आकर्षक तथा प्रभावपूर्ण नहीं है, परन्तु सर्वांश रूप में इनकी कथावस्तु में प्रस्तावना, मुख्यांश, चरमसीमा तथा पृष्ठ भाग का सौन्दर्य सर्वत्र विद्यमान रहता है।

पात्र तथा चरित्र-चित्रण

कहानी में सम्पूर्ण जीवन की व्याख्या न होकर जीवन के किसी एक अंश पर प्रकाश डाला जाता है तथा इसके लिए कम से कम पात्रों को स्थान देना उचित होता है। 'कौशिक' जी ने पात्रों के चयन में अत्यधिक कुशलता से काम लिया है। इनकी अधिकांश कहानियों में दो-तीन अथवा चार पात्रों को ही स्थान दिया गया है। कुछ कहानियों में इससे अधिक पात्र भी आ गए हैं, परन्तु व्यर्थ कथा से असम्बद्ध पात्रों को 'कौशिक' जी ने अपनी कहानियों के अन्तर्गत नहीं रखा है।

मानव-जीवन के कुशल चित्रकार को संवेदनशीलता के साथ पात्र के जीवन से तादात्म्य स्थापित करना होता है। वह पात्र की गतिविधियों तथा भाव-भंगिमाओं का अनुभूतिमूलक ज्ञान प्राप्त करने के लिए उसके रहस्यमय जीवन में प्रवेश कर, उसके विचारों और भावनाओं का निरीक्षण करके अपनी कल्पना-शक्ति के द्वारा चरित्र

---

१. 'हिन्दी कहानियाँ' [आलोचनात्मक अध्ययन]—पृ० १८७।
२. 'दमित फूल' [क०-सं०]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक'—पृ० १५७।

निर्धारित करता है। ये पात्र या तो कहानीकार अपने चतुर्दिक रहने वाले सम्बन्धियों परिचित व्यक्तियों तथा मित्रों में से खोजता है अथवा इतिहास और साहित्यक ग्रन्थों में वर्णित पात्रों को अपनी रचना का आधार बनाता है। चरित्र-चित्रण द्वारा कहानीकार मानव-जीवन का जो अध्ययन प्रस्तुत करता है वह उसकी अपनी तर्कबुद्धि, विवेचनशीलता, कल्पना, अध्ययनशीलता, व्यावहारिक ज्ञान तथा संवेदनशीलता पर आधारित रहता है। यथार्थ पात्रों को अपनी कल्पना के रंग में रंगकर कहानीकार उनमें अपनी प्रतिभा का आरोप करता है। फलस्वरूप वे चरित्र पाठक के समक्ष अपने वास्तविक रूप में न आकर लेखक के मनोवांछित रूप में प्रस्तुत होते हैं।

कहानी में संक्षिप्तता के कारण चरित्र-विकास के लिए कम सुविधा होती है, इसलिए कुशल कहानीकार संकेत-मात्र से पात्र के विशिष्ट गुण-अवगुणों को चित्रित करता है, पात्र के चरित्र के किसी एक चमत्कार बिंदु की ओर अग्रसर होता हुआ ऐसे स्थल पर लेजाकर मोड़ देता है जिससे उसका सम्पूर्ण-चरित्र मुखरित हो उठता है। चरित्र-चित्रण की आधुनिकतम प्रवृत्ति मनोवैज्ञानिक विश्लेषण पर आधारित हैं। उसमें अन्तर्जगत के विचारों तथा भावों का संघर्ष दिखाई देता है। आधुनिक लेखक भौतिक तत्वों के चित्रण की अपेक्षा मानव-प्रवृत्तियों की समीक्षा करना अधिक पसन्द करता है।

'कौशिक' जी का मानव-जीवन का अध्ययन बहुत गंभीर था। इन्होंने यथार्थ जीवन से पात्र लेकर उनका चरित्र अपने आदर्श के अनुकूल कहानियों में अंकित किया। चरित्र-चित्रण की कला के विषय में उन्होंने एक स्थान पर लिखा है—"नित्य जो चरित्र देखने को मिलते हैं, उन चरित्रों से भिन्न कोई ऐसा अनोखा चरित्र उपस्थित करना, जिसे देखकर विज्ञ पाठक फड़क उठें—उनके हृदय में यह बात पैदा हो कि मनुष्य-चरित्र के सम्बन्ध में उन्हें कोई नई बात मालूम हुई, यही चरित्र-चित्रण की कला है।"[1] इसी दृष्टिकोण के आधार पर 'कौशिक' जी ने अपनी कहानियों में पात्रों का चरित्र-चित्रण किया है।

गुलाबराय ने चरित्र-चित्रण के दो मुख्य प्रकार स्वीकार किये हैं[2]—(क) प्रत्यक्ष या विश्लेषणात्मक, (ख) परोक्ष या नाटकीय। प्रथम में लेखक स्वयं पात्र के चरित्र पर प्रकाश डालता है, दूसरे में चरित्र-पात्रों के वार्तालाप अथवा कार्य-कलाप

---

१. उद्धृत 'हिन्दी कहानी : उद्भव और विकास'—डा० सुरेश सिनहा, पृ० १७५।
१. 'काव्य के रूप'—पृ० २००।

से अनुमेय रहता है। इसमें लेखक किसी पात्र द्वारा सीधे या संकेतात्मक रूप से टीका टिप्पणी भी करा देता है। सांकेतिक चित्रण में गुणों की अपेक्षा उनके द्योतन करने वाले कार्यों का अधिक वर्णन रहता है। प्रत्यक्ष-चित्रण में भी प्रायः सांकेतिक ढंग ही अधिक पसन्द किया जाता है। 'कौशिक' जी ने अपने कथा-साहित्य में चरित्र-चित्रण के लिए अनेक रीतियों का प्रयोग किया है—

सांकेतिक रूप से प्रत्यक्ष या विश्लेषणात्मक चरित्र-चित्रण :—

(क) "राजा निरंजन बहुत ही नेक आदमी हैं, कसर केवल इतनी ही है कि नेक होते हुए भी थोड़े से बेवकूफ़ हैं, हालांकि अपने मतलब के बड़े पक्के हैं। दूसरों को चरका बताने और उल्लू बनाने में राजा निरंजन को कमाल हासिल है ऐसे-वैसे को चुटकियों में उड़ा देते हैं लेकिन फिर भी कुछ लोग इन्हें किसी कदर बेवकूफ़ समझते हैं—यह राजा निरंजन का दुर्भाग्य ही समझना चाहिए।"[1] (राजा निरंजन)

(ख) "शुक्ल जी कभी स्पष्ट उत्तर न देते थे। सदैव दुटप्पी बात कहते थे। शुक्ल जी में यह एक गुण भी था कि जैसी अधिकांश जनता की रुचि देखते थे, वैसी ही हाँकते थे। जब देखते थे कि जनता की रुचि इस समय देश के अमुक बड़े नेता गालियाँ देने की ओर अधिक है, तब आप गालियों की ऐसी फुलझड़ियाँ छोड़ते कि सुनने वाले प्रसन्नता के मारे फूल उठते, और जब देखते कि जनता इस समय उनकी प्रशंसा सुनने में प्रसन्न होती है, तब तारीफों के पुल बाँध देते थे।"[2] (लीडरी का पेशा)

परोक्ष चित्रण—'कौशिक' जी ने अनेक स्थलों पर पात्रों का चरित्र-चित्रण उनके पारस्परिक वार्तालाप द्वारा स्पष्ट किया है। कहीं उनके पात्र स्वयं अपने गुण-दोषों का वर्णन करते हैं, कहीं एक दूसरे के गुण-दोषों पर प्रकाश डालते हैं तथा कहीं किसी अन्य व्यक्ति के चरित्र पर टीका-टिप्पणी करते हुए दिखाई पड़ते हैं—

(क) "चमेली, मैं बड़ा अधम हूँ, बड़ा नीच हूँ। इसमें संदेह नहीं कि एक घंटा पहले तक मैं कपट वेष धारण किए हुए था; परन्तु ईश्वर साक्षी हैं, इस समय मैं अपने पिछले शुष्क व्यवहार पर अत्यन्त लज्जित हूँ। मैंने जो कुछ किया, उसका प्रायश्चित यदि ये प्राण देकर भी हो सके, तो मैं करने को तैयार हूँ। मैं अंधा हो गया था। मैं नहीं जानता, मुझे क्या हो गया था। मुझे इस बात का आश्चर्य है कि मैंने कैसे तुमसे यह दुर्व्यवहार किया।"[3] (वह प्रतिमा)

---

१. 'प्रथिल फूल' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० ८३।
२. 'चित्रशाला' ,, ,, पृ० ६१।
३. ,, ,, ,, पृ० १२६।

(ख)"—स्नेहलता हँसने के पश्चात् बोली—"तुम इतने कोमल हो प्रबुद्ध कि तुम किसी को हानि पहुँचा सकते हो, इसमें मुझे संदेह है।"

"मैं कोमल हूँ?" प्रबुद्ध ने प्रसन्न मुख होकर पूछा।

"हाँ! कम से कम शरीर में तो कोमल होई! हृदय की मुझे खबर नहीं।"[1] (विजय)

(ग) "वह बड़ा बदमाश आदमी है। गाँव भर उससे डरता है। उसके डर के मारे कोई स्त्री अकेली बाहर नहीं जाती। खैर जो हुआ सो हुआ; अब अकेली मत जाना।"[2] (साध की होली)

कहानी में गढ़े-गढ़ाये चरित्रों पर प्रकाश डाला जाता है, विकास की गुंजाइश कम रहती है। 'कौशिक' जी ने अपनी अनेक कहानियों—'ताई', 'विजय', 'शंखनाद', 'मालती का प्रेम', संशोधन, तथा 'वीर श्रेष्ठ' आदि में किसी दुर्घटना का संयोजन कर पात्रों के चरित्र में आकस्मिक परिवर्तन उपस्थित कर आदर्श चरित्रों की स्थापना की है।

'कौशिक' जी की कहानियों में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की विधि से चरित्र-चित्रण उस रूप में प्राप्त नहीं होता जैसा प्रसाद, प्रेमचन्द तथा अज्ञेय आदि की कहानियों में उपलब्ध है। पात्रों के मनोभावों, अन्तर्द्वन्द्व तथा आन्तरिक विशेषताओं को 'कौशिक' जी ने विशेष रूप से वर्णन द्वारा प्रस्तुत किया है। व्यञ्जित रूप में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का इनके युग में अभाव था। इनकी कहानियों में मानव-जीवन की प्रवृत्तियों तथा संघर्षों का सुन्दर उल्लेख हुआ है।

कथोपकथन

कथोपकथन द्वारा कहानी के सुन्दरतम स्थलों को तर्क-वितर्क और प्रतिपादन द्वारा चमत्कारापूर्ण बनाया जाता है। पात्रों के चिंतन, साहस और बौद्धिक विकास का ज्ञान कराने मे इनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। पात्रों के मनोभाव कथोपकथनों की लड़ियो में गुँथकर संक्षेप में उतना कह जाते हैं जितना स्पष्ट करने के लिए इतिवृत्तात्मक वर्णन में पृष्ठ के पृष्ठ काले करने पर भी न कहा जा सके। कथोपकथन नाट्य-रचना के मूल साधन है परन्तु साधारणतः इनका प्रयोग कहानी

---

१. 'कन्या' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० १७८।
२. 'साध की होली' ,, ,, पृ० ५।

और उपन्यास में भी कम नहीं होता। इन के सौंदर्य से कहानी में गतिशीलता आती है। भावात्मक चित्रणों के स्थलों को उभारने में भी जिन सूक्ष्म भावों का विवेचन कथोपकथनों द्वारा किया जाता है, उनमें इतिवृत्तात्मक वर्णन की अपेक्षा अधिक सजीवता होती है। कहानी में संवादों का 'लघु-प्रसारी, वैदग्ध्यपूर्ण, आकर्षक और चमत्कारी प्रयोग ही इष्ट होता है।'[1]

'कौशिक' जी ने अपने कथा-साहित्य में संक्षिप्त, आकर्षक तथा सारगर्भित संवादों या कथोपकथनों का ही अधिक प्रयोग किया है। यद्यपि कहीं कहीं लम्बे कथोपकथन भी आ गए हैं जहाँ कहानीकार की भावुक प्रवृत्ति प्रबल हो उठी है, परन्तु अधिकांशतः इनके संवाद छोटे तथा परिस्थिति के अनुकूल हैं, निरर्थक नहीं। इनके द्वारा 'कौशिक' जी ने कहीं पात्रों चरित्र पर प्रकाश डाला है, कहीं घटनाओं को गतिशील बनाया है तो कहीं तर्क-वितर्कमयी उक्तियों द्वारा सिद्धान्त-प्रतिपादन के लिए भी इनका प्रयोग किया है। इनके कथोपकथनों का प्रयोग देखिये, कितने सशक्त प्रभाव पूर्ण एवं उपयुक्त हैं :—

"माता—मैं सब सोच चुकी हूँ। तुझे मेरा कहना करना ही पड़ेगा।

रामे०—माँ! तुम अपने मातृत्व और मेरे पुत्रत्व से अनुचित लाभ उठाना चाहती हो।

माता—मेरी आज्ञा ही न्याय है। तुझे मेरा कहना करना ही पड़ेगा।

रामे०—(क्रुद्ध होकर) तो मैं भी कहता हूँ कि मैं नहीं करूँगा।"[2] (वन्ध्या)

ये संवाद माता तथा पुत्र के दृढ़ चरित्र की ओर संकेत करते हैं। डॉ० भागीरथ मिश्र के शब्दों में—"कौशिक जी अपनी कहानियों में कथोपकथन को सबसे अधिक महत्त्व देते हैं। उनका विचार है कि हमारा जीवन बातचीत में ही बीतता है अतः स्वाभाविकता लाने के लिए कथोपकथन के द्वारा ही अधिकांश कथानक और चरित्र का उद्घाटन करना चाहिए।"[3] सरलता, स्वाभाविकता तथा अभिनयात्मकता इनके संवादों की विशेषताएँ हैं और नाटकीय तत्त्वों का इनमें पूर्ण समावेश हुआ है। कहीं-कहीं कथोपकथनों के बीच में 'कौशिक' जी ने इस प्रकार के वाक्य—"पाठक समझ

---

१. 'कहानी का रचना-विधान'—डॉ० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा, पृ० १२२।

२. 'वन्ध्या' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृ० ५६।

३. 'हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास'—रामबहोरी शुक्ल और डॉ० भगीरथ मिश्र, पृ० २१६।

(ख)"—स्नेहलता हँसने के पश्चात् बोली—"तुम इतने कोमल हो कि तुम किसी को हानि पहुँचा सकते हो, इसमें मुझे संदेह है।"

"मैं कोमल हूँ ?" प्रबुद्ध ने प्रसन्न मुख होकर पूछा।

"हाँ ! कम से कम शरीर में तो कोमल होई ! हृदय की मुझे स नहीं।"[1] (विजय)

(ग) "वह बड़ा बदमाश आदमी है। गाँव भर उससे डरता है। उसके डर मारे कोई स्त्री अकेली बाहर नहीं जाती। खैर जो हुआ सो हुआ; अब अके मत जाना।"[2] (माघ की होली)

कहानी में गढ़े-गढ़ाये चरित्रों पर प्रकाश डाला जाता है, विकास की गुंजा इश कम रहती है। 'कौशिक' जी ने अपनी अनेक कहानियों—'ताई', 'विजय', 'शंखनाद', 'मालती का प्रेम', संशोधन, तथा 'वीर श्रेष्ठ' आदि में किसी दुर्घटना का संयोजन कर पात्रों के चरित्र में आकस्मिक परिवर्तन उपस्थित कर आदर्श चरित्रों की स्थापना की है।

'कौशिक' जी की कहानियों में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की विधि से चरित्र-चित्रण उस रूप में प्राप्त नहीं होता जैसा प्रसाद, प्रेमचन्द तथा अज्ञेय आदि की कहानियों में उपलब्ध है। पात्रों के मनोभावों, अन्तर्द्वन्द्व तथा आन्तरिक क्रियाओं को 'कौशिक' जी ने विशेष रूप से वर्णन द्वारा प्रस्तुत किया है। व्यक्तिगत रूप में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का इनके युग में अभाव था। इनकी कहानियों में मानव-जीवन की प्रवृत्तियों तथा संघर्षों का सुन्दर उल्लेख हुआ है।

कथोपकथन

कथोपकथन द्वारा कहानी के सुन्दरतम स्थलों को तर्क-वितर्क और प्रतिवाद द्वारा चमत्कारापूर्ण बनाया जाता है। पात्रों के चिंतन, साहस और बौद्धिक विकास का ज्ञान कराने में इनका महत्वपूर्ण योगदान रहता है। पात्रों के मनोभाव कथोपकथनों की लड़ियों में गुँथकर संक्षेप में उतना कह जाते हैं जितना स्पष्ट करने के लिए इतिवृत्तात्मक वर्णन में पृष्ठ के पृष्ठ काले करने पर भी न कथोपकथन नाट्य-रचना के मूल साधन हैं परन्तु साधारणतः

---

1. 'कल्पा' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भर·
2. 'माघ की होली' ,, ,,

है कि "कभी-कभी भक्षक भी रक्षक हो जाता है।"[1] इसी प्रकार अन्य कहानियों में 'कौशिक' जी ने इसी प्रकार वर्णित रूप में या क्रिया-कलापों द्वारा संकेत रूप में अपने उद्देश्य का निर्वाह किया है। इनका सम्पूर्ण कथा-साहित्य उद्देश्य-प्रधान है।

भाषा-शैली

लेखक के विचार तथा भावनाओं को पाठक तक पहुँचाने वाला, रचना के विविध अंगों की पुष्टि का साधन भाषा है। कहानी-लेखन में भाषा जितनी अधिक व्यंजक होती है, उतनी ही संक्षेप में अधिकाधिक भावों और विचारों को स्पष्ट करने में सफल होती है। भाषा-सौष्ठव से अभिप्राय विषयानुकूल सार्थक, शब्दों के चयन, कलात्मक वाक्य-विन्यास, पदों के उपयुक्त गठन और विराम आदि चिन्हों के स्थानानुकूल प्रयोगों से है। विधा-विशेष के लेखन में भाषा-विशेष का प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त विषय तथा पात्रों का भाषा से और भी घनिष्ट सम्बन्ध होता है। भाषा विषय और पात्रानुकूल होनी चाहिए।

शैली लेखक की आन्तरिक तथा बाह्य प्रतिभा का मूर्त रूप है। आन्तरिक प्रतिभा से हमारा तात्पर्य उसके बौद्धिक तत्व, भाव-तत्व तथा कल्पना-तत्व से हैं। बाह्य प्रतिभा के अन्तर्गत लेखक का वह चमत्कारिक स्वरूप हमारे समक्ष आता है जिसके द्वारा वह विषयोपयुक्त भाषा और कलात्मक प्रयोगों के द्वारा रचना में चमत्कार उत्पन्न करता है। शैली पर लेखक के व्यक्तित्व की छाप होनी चाहिए। शैली के विशेष प्रयोगों के कारण ही पाठक किसी रचना को पढ़कर कह उठता है कि 'यह अमुक लेखक की कृति है।' बफन के शब्दों में 'शैली ही व्यक्ति है।' भाषा की दृष्टि से शैली तीन प्रकार की मानी जाती है—(१) साधारण मुहावरेदार भाषा-शैली, (२) अलंकृत भाषा-शैली, (३) संस्कृत-गर्भित भाषा-शैली।

'कौशिक' जी ने साधारण मुहावरेदार भाषा-शैली का प्रयोग अपने कथा-साहित्य के अन्तर्गत किया है। प्रेमचन्द के कथा-साहित्य में भी इसी भाषा-शैली का प्रयोग हुआ है। 'कौशिक' जी हिन्दी, संस्कृत, फ़ारसी, उर्दू, बंगला, अरबी तथा अंग्रेजी आदि भाषाओं के मर्मज्ञ विद्वान थे। इन सभी भाषाओं पर इनका विशेष अधिकार था और इन सभी के शब्द आपकी लेखनी के संकेत पर साहित्य-सरोवर में यत्र-तत्र खिल उठे हैं। इनकी भाषा कहानियों की रोचकता, भावगम्यता तथा

---

१. 'रक्षा-बन्धन' [कहानी-संग्रह]—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', पृष्ठ १३१।

'कौशिक' जी की भाषा पात्रानुकूल है। इनके शिक्षित पात्र साहित्यिक भाषा का प्रयोग करते हैं, अशिक्षित तथा साधारण ग्रामीण पात्र ग्रामीण और साधारण असाहित्यिक भाषा का प्रयोग करते हैं। मुसलमान पात्रों की भाषा में उर्दू, फ़ारसी तथा अरबी भाषाओं के शब्दों की भरमार है, बंगाली पात्र बंगला भाषा के शब्दों का अधिक प्रयोग करते हैं तथा अंग्रेजी पढ़े-लिखे पात्रों की भाषा में अंग्रेजी के शब्दों तथा वाक्यों का प्रयोग मिलता है। इन सभी भाषाओं का प्रयोग देवनागरी लिपि के माध्यम से किया गया है। 'कौशिक' जी के विभिन्न पात्रों की भाषाओं के कुछ प्रयोग नीचे देखिये :—

(क) "ननकू भइया, यो तुम का मेहरियन की तना (तरह) करैं लागत हो मनई के मरे मेहेरिया रोवत है, मेहेरिया के मरे कहीं (कहीं) मनई नही रोवत हैं। मेहेरिया तो मरैं (मरा) ही करत हैं।"[१] (ननकू चौधरी)

(ख) "मँगनू काका बोले– "अब भागते क्यों हो? बैठो रहो। हम सठिया गये हैं? ये सरऊ अभी बारह ही बरस के हैं– चोर कहीं का। बच गया! यदि कहीं झल्ली पड़ जाती तो छठी का दूध याद आ जाता।"[२] (मोह)

(ग) "वल्लुदा वहाँ की जबान ही नहीं समझ में आती—और वहाँ के आदमी—इलाही तोबा। इस कदर गंवार, बदतमीज कि क्या अर्ज करूँ! हमें तो चाहे अल्लाह तआला दोजख में ही भेजे, मगर वहाँ भी लखनऊ वालों का ही साथ अता फरमावे।"[३] (तमाचा)

(घ) "काऊस जी बोले—"मोहनलाल स्टेशन मास्टर आवे छे।"

"आज बहु दिवस पछी आयो।" नसेरवाँ जी ने कहा।

"साहै माणस छे।"

"ते तो बरोबर छे।"[४] (नाटक)

(ङ) "यह क्या बात? यह तो गजेटेड हालो ड है।"[५] (लोकापवाद)

---

१. 'कल्लोल' [कहानी-संग्रह]—पृ० १५७-१५८।
२. 'पेरिस की नर्तकी' ,, —पृ० १२२।
३. 'अप्रिल फूल' ,, —पृ० २१।
४. 'ईश्वरीय दण्ड' ,, —पृ० ११३-११४।
५. 'प्रतिशोध' ,, —पृ० १०६।

उक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि 'कौशिक' जी को पात्रानुकूल भाषा के प्रयोग में अत्यधिक सफलता मिली है। तत्सम शब्दों का प्रयोग इनकी भाषा में अत्यन्त कुशलता के साथ हुआ है। दृष्टि, प्रविष्ट, यथेष्ट, अष्टादश, कदाचित्, प्रत्युत्तर, सदस्यगण, प्रतिष्ठित, निरुत्तर, सज्जन, दीर्घ आदि शब्द संस्कृत से यथावत् रूप में ग्रहण किये हैं जिनके प्रयोग ने इनकी भाषा को यथेष्ट साहित्यिकता प्रदान की है। 'कौशिक' जी ने अपनी कहानियों में साधारण बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है अतः अनेक स्थलों में निरर्थक तथा अनगढ़ शब्दों का भी स्वतः समावेश हो गया है जैसे सटर-पटर, मेले-ठेले, भोजन-वोजन, उन्नति-मुन्नति, लस्टम-पस्टम, श्लोक-श्लोक' सुफल-उफल या लूटेड-बुटेड आदि। कुछ आलोचकों ने 'कौशिक' जी की भाषा में प्रयुक्त ग्रामीण-अनगढ़ शब्दावली तथा विदेशी शब्दों के प्रयोग को अनुचित समझा है। इस विषय में केवल इतना ही समझ लेना पर्याप्त है कि अनगढ़ शब्दों का प्रयोग अनगढ़ पात्रों के मुख से कराया गया है और अन्य भाषाओं का प्रयोग पात्रानुकूल है, जो स्वाभाविकता की दृष्टि से उपयुक्त है। अतः यह भाषा-सम्बन्धी दोष न होकर कहानीकार की विशेष योग्यता का परिचायक है। औचित्य की सीमा का कहीं अतिक्रमण नहीं किया गया है। पद-विन्यास सुगठित है और प्रवाह में कहीं बाधा उपस्थित नहीं होती। 'कौशिक' जी की भाषा कहानी-विधा के सर्वथा अनुकूल है। जिस समाज का चित्रण किया गया है तथा जो परिस्थितियाँ समाज में व्यक्त हैं उनके अनुरूप ही शब्दों का चयन और वाक्यों का गठन इनकी भाषा में दृष्टिगत होता है। श्री सद्‌गुरुशरण अवस्थी जी के शब्दों में —"विषय की दृष्टि से 'कौशिक' जी चाहे पिछड़े हुए कहानी लेखक हो जायँ, परन्तु भाषा की दृष्टि से आप हमेशा हरे हैं।"[1]

'कौशिक' जी ने अपने कथा-साहित्य में सामान्यतया मुहावरेदार भाषा-शैली का प्रयोग किया है। रचनाशैली को प्रभावोत्पादक बनाने में सुगठित वाक्य-विन्यास तथा उचित शब्दों का चयन जितना आवश्यक है उतना ही उसमें चमत्कार उत्पन्न करने के लिए मुहावरे तथा लोकोक्तियों का प्रयोग भी साहित्यकारों ने आवश्यक माना है। इनका प्रयोग भाषा में अलंकारिता के अभाव की पूर्ति करता है। जिस प्रकार आभूषण में जड़ा हुआ मोती उसके सौंदर्य की वृद्धि में सहायक होता है

गद्य-गाथा'—पृ० १०६।

उसी प्रकार भाषा मे प्रयुक्त मुहावरे और लोकोक्तियाँ उसे रोचक बनाने में सहायक सिद्ध होती है। इनकी मुहावरेदार भाषा का एक उदाहरण नीचे देखिये—

"नया मुसलमान प्याज बहुत खाता है' की कहावत के अनुसार त्रिपाठी जी मिश्र बनकर कान्यकुब्जता की खराद पर चढ़ गये। एक तो कड़वा करेला दूसरे नीम चढ़ा। एक तो मिश्र जी पहले से ही कान्यकुब्ज थे उस पर हो गये मुरादाबादी मिश्र। फिर क्या कहना था। ब्राह्मणत्व का पूरा ठेका उन्ही को मिल गया।"[1] (हवा)

'कौशिक' जी की रचना-शैली में लोकोक्तियो तथा मुहावरो का इतना बाहुल्य नहीं है कि पाठक को खटकने लगे। इनका प्रयोग लेखक ने बहुत नपे-तुले ढंग से किया है। जिससे निश्चय ही कथाओं की रोचकता में अभिवृद्धि हुई है। अनेक सुन्दर लोकोक्तियों तथा मुहावरों ने इनकी भाषा मे सजीवता ला दी है, नीचे कुछ प्रयोग द्रष्टव्य हैं :—

लोकोक्तियों का प्रयोग—

(क) डेढ़ सौ महीना मिला है। आनन्द से खाते-पीते हैं। न ऊधो का लेना, न माधो का देना।"[2] (पथनिर्देश)

(ख) "वही कहावत है—"एक टका मेरी आली, नथ गढ़ाऊँ कि बाली ?" कुल बीस हजार रुपल्ली, उसमें मोटर भी हो, कोठी भी हो, बाग भी हो।"[3] (पथ-निर्देश)

(ग) "इसी कल्पना के बल पर कवि लोग बड़ी-बड़ी अद्भुत बातें सोच डालते हैं—जहाँ न पहुँचे रवि वहाँ पहुँचे कवि।"[4] (पथ-निर्देश)

(घ) "नीच जाति के पास जहाँ चार पैसे हुए, वहीं फिर वह अँगूठो के बल चलने लगता है। कहावत ही है—"गगरी दाना, सूद उतराना।"[5] (ईश्वर का डर)

(ङ) "कोई मरे या जिये मुहल्ले वालों को कुछ भ्वास्ता ही नहीं। तीन लोक से मथुरा न्यारी।"[6] (लाला की होली)

---

1. 'रक्षाबन्धन' [कल्लोल-सप्तक]— पृ० ११।
2. 'साल की होली' ,, ,, ८६।
3. ,, ,, ,, ८५।
4. ,, ,, ,, ७६-७७।
5. ,, ,, ,, ११५।
6. 'देशप्रेम एक' ,, ,, १०२।

ने कहानियों में प्रस्तुत युग एवं समाज की दृष्टि से किया है। इनकी कहानियों का उद्देश्य प्रेमचन्द की तरह आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की स्थापना ही रहा है। भाषा-शैली सर्वथा कहानियों के पात्रों तथा समस्याओं आदि के उपयुक्त है। 'कौशिक' जी की कहानी-कला प्रेमचन्द की कहानी कला के सदृश ही है। अति-आधुनिक कथा-शिल्प की दृष्टि से 'कौशिक' जी की कहानियों का मूल्यांकन करते हुए उनमें दोषों तथा न्यूनताओं की खोज करना अनावश्यक तथा अनुपयुक्त है। अपने युग की कहानी-कला तथा रचना-विधान की दृष्टि से इनकी कहानियाँ उत्तम कोटि की हैं। हिन्दी-कहानी-कला के विकास में इनकी कहानियों का महत्त्व सर्वोपरि है।

किया। किसी विषय पर चलाऊ संकेत मात्र कर देना इनके साहित्य का लक्ष्य नहीं था। अपने कथा-साहित्य के अन्तर्गत इन्होंने विशेष रूप से नागरिक परिवार तथा उसकी समस्याओं का निरूपण किया। परिवार ही जाति, समाज अथवा राष्ट्र की छोटी से छोटी इकाई है। इस छोटे क्षेत्र में हम 'कौशिक' जी का जीवन उन पात्रों के साथ घुल-मिलकर एक हो गया है। इसी सहृदयता ने लेखक की विषय-ग्राह्यता को पूर्णता प्रदान की।

विषयग्राह्यता का सम्बन्ध लेखक की प्रतिभा, अध्ययन, अनुभव, अनुभूति तथा कल्पना आदि सभी तत्वों के साथ रहता है। रचनात्मक विषय का, अध्ययन द्वारा यह पूर्ण ज्ञान रखने पर ही प्रतिभावान साहित्यकार अपने अभीष्ट विषय के साथ समुचित न्याय कर सकता है। भाषा—सौष्ठव, तथा शैलीगत नवीन प्रयोगों द्वारा यह संभव हो सकता है कि वह अपरिपक्व मस्तिष्क वाले पाठकों का अल्प मनोरंजन कर सके अथवा उनकी जिज्ञासापूर्ति में सहायक हो सके, परन्तु अध्ययनशील पाठक की जिज्ञासापूर्ति उस लेखक के द्वारा संभव नहीं जिसने उस विषय को पूर्णतया ग्रहण नहीं कर लिया हो जिसे उसने रचनाबद्ध किया। अध्ययन के अतिरिक्त उस विषय से सम्बन्धित कुछ न कुछ अनुभव प्राप्त साहित्यकार अपनी रचना को अधिक सफल बना सकता है। अध्ययन और अनुभव से प्राप्त ज्ञान की रिक्तता को पूर्ण करने के लिए कल्पना तथा अनुभूति की आवश्यकता होती है। ये दोनों असीमित क्षेत्र में विचरण करती हैं। अनुभूति का सम्बन्ध लेखक की उस विशेष प्रतिभा से है जिसके द्वारा वह अप्रस्तुत को प्रस्तुत करता है। इसके साथ उसकी कल्पनाशक्ति का सहयोग रहता है तथा चिन्तन इसे पुष्टि प्रदान करता है। अध्ययन मुख्यतः भूतकाल का ज्ञान कराता है, अनुभव वर्तमान स्थिति का स्पष्टीकरण करता है तथा अनुभूति भविष्य की कल्पना से भूत और वर्तमान के साथ सामञ्जस्य स्थापित करती है। इस प्रकार सहृदयतापूर्वक अध्ययन, अनुभव और अनुभूति द्वारा विषय का सर्वाङ्गीण चित्रण प्रस्तुत करना संभव होता है।

'कौशिक' जी का अध्ययन, साहित्यिक अध्ययन की अपेक्षा अनुभूति और अनुभव के क्षेत्र में अधिक पूर्ण था। ये हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, फ़ारसी, बंगला तथा अंग्रेजी आदि भाषाओं के साहित्य में प्रवेश रखते थे। इसका अर्थ यह नहीं कि इन्होंने इन सब भाषाओं के साहित्य का व्यापक अध्ययन किया था, परन्तु इतना तो निश्चय ही है कि इन भाषाओं की कुछ रचनाओं को इन्होंने पढ़ा और उनकी चिंतन तथा शैलीगत विशेषताओं का अनुभव किया। प्रतिभासम्पन्न कलाकार के लिए कुछ से सम्पूर्ण का अनुमान लगा लेना कठिन कार्य नहीं। साहित्यिक अध्ययन से

विकास के लिए यथेष्ट परिश्रम करना पड़ा।"[1] 'कौशिक' जी ने सर्वप्रथम सामाजि मनोवृत्ति के सुधार की दिशा में नवीन लक्ष्य स्थापित किया तथा समाज के निम्न मध्य तथा उच्च सभी प्रकार के पात्रों का यथार्थ चित्र उपस्थित किया। इस चित्र मे यत्र-तत्र मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भी बहुत महत्वपूर्ण हो उठा है। मानव की मने प्रवृत्तियों का 'कौशिक' जी ने सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत किया है, जैसे—

(क) "मनुष्य प्रत्येक दशा में अपने हृदय की सांत्वना का आधार ढूंढ लेत है। अत्यन्त कष्ट तथा दुःख में फँसा हुआ मनुष्य भी कोई न कोई ऐसी बात ढूं लेता है। जिसका आश्रय लेकर वह सारे कष्टों को मोल लेता है। मनुष्य का यह स्वभाव है, उसकी प्रकृति है। यदि ऐसा न होता तो मनुष्य का जीवित रहना कठिन हो जाता।"[2] (संतोष-धन)

(ख) "मनुष्य चाहे जितना स्वार्थी, हठधर्मी, क्रोधी तथा अत्याचारी हो परन्तु निर्भीकता-पूर्वक कही हुई सच्ची और सीधी बात उसके हृदय पर प्रभाव अवश्य डालती है, चाहे वह एक क्षण ही के लिए क्यों न हो।"[3] (सच्चा कवि)

विषय के अतिरिक्त शैली के क्षेत्र में भी 'कौशिक' जी ने मौलिक प्रयोग प्रस्तुत किये। इनसे पूर्व-कथा-साहित्य में वर्णनात्मक शैली ही विशेष रूप से प्रयुक्त होती थी। 'कौशिक' जी ने सर्वप्रथम हिंदी कथा-साहित्य में संवादात्मक शैली का प्रयोग किया। हम इनके उन छुटीले व्यंग्यात्मक प्रयोगों को भी नहीं भुला सकते जिनके द्वारा सामाजिक कुरीतियों की आलोचना की गई है। दुबे जी की चिट्ठियों को यदि कहानी-साहित्य का ही एक रूप मान लिया जाये तो वह भी इनका शैलीगत-मौलिक प्रयोग ही है।

'कौशिक' जी एक सहृदय व्यक्ति थे। किसी विषय में प्रवेश प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम सहृदयता की ही आवश्यकता होती है, जिसके माध्यम से साहित्यकार 'अन्य' (समाज, व्यक्ति प्रकृति, समस्या, विचार तथा स्वभाव) से सामञ्जस्य स्थापित करता है। सहृदय व्यक्ति दूसरे के मन की भावनाओं आकांक्षाओं और विचारों में प्रवेश करता है, तभी उसका ज्ञान 'अन्य' के विषय में निश्चित आधार धारण करता है। 'कौशिक' जी ने अपनी कला-सृजन-प्रक्रिया के लिए जिन पात्रों तथा विषयों का चयन किया उनके साथ पूर्ण सहृदयता तथा सहानुभूति के साथ निर्वा

---

1. 'हमारे लेखक'—पृ० ११२।
2. 'कल्प का द्वार' [भा०-१०]—पृ० ६७।
3. " " पृ० ६६।

[कि]या। किसी विषय पर चलाऊ संकेत मात्र कर देना इनके साहित्य का लक्ष्य [न]हीं था। अपने कथा-साहित्य के अन्तर्गत इन्होंने विशेष रूप से नागरिक परिवार [त]था उसकी समस्याओं का निरूपण किया। परिवार ही जाति, समाज अथवा राष्ट्र [क]ी छोटी से छोटी इकाई है। इस छोटे क्षेत्र मे हम 'कौशिक' जी का जीवन उन [पा]त्रों के साथ घुल-मिलकर एक हो गया है। इसी सहृदयता ने लेखक की विषय-[ग्र]ाह्यता को पूर्णता प्रदान की।

विषयग्राह्यता का सम्बन्ध लेखक की प्रतिभा, अध्ययन, अनुभव, अनुभूति [त]था कल्पना आदि सभी तत्वों के साथ रहता है। रचनात्मक विषय का, अध्ययन [द्व]ारा यह पूर्ण ज्ञान रखने पर ही प्रतिभावान साहित्यकार अपने अभीष्ट विषय [क]े साथ समुचित न्याय कर सकता है। भाषा—सौष्ठव, तथा शैलीगत नवीन प्रयोगों [द्व]ारा यह सभव हो सकता है कि वह अपरिपक्व मस्तिष्क वाले पाठकों का अल्प मनो-[र]ंजन कर सके अथवा उनकी जिज्ञासापूर्ति में सहायक हो सके, परन्तु अध्ययनशील [प]ाठक की जिज्ञासापूर्ति उस लेखक के द्वारा संभव नहीं जिसने उस विषय को [पू]र्णतया ग्रहण नहीं कर लिया हो जिसे उसने रचनाबद्ध किया। अध्ययन के [अ]तिरिक्त उस विषय से सम्बन्धित कुछ न कुछ अनुभव प्राप्त साहित्यकार अपनी [र]चना को अधिक सफल बना सकता है। अध्ययन और अनुभव से प्राप्त ज्ञान की [प]रिपक्वता को पूर्ण करने के लिए कल्पना तथा अनुभूति की आवश्यकता होती है। [य]े दोनों असीमित क्षेत्र में विचरण करती हैं। अनुभूति का सम्बन्ध लेखक की उस [व]िशेष प्रतिभा से है जिसके द्वारा वह अप्रस्तुत को प्रस्तुत करता है। इसके साथ उसकी कल्पनाशक्ति का सहयोग रहता है तथा चिन्तन इसे पुष्टि प्रदान करता है। अध्ययन मुख्यतः भूतकाल का ज्ञान कराता है, अनुभव वर्तमान स्थिति का स्पष्टीकरण करता है तथा अनुभूति भविष्य की कल्पना से भूत और वर्तमान के साथ सामञ्जस्य स्थापित करती है। इस प्रकार सहृदयतापूर्वक अध्ययन, अनुभव और अनुभूति द्वारा विषय का सर्वाङ्गीण चित्रण प्रस्तुत करना संभव होता है।

'कौशिक' जी का अध्ययन, साहित्यिक अध्ययन की अपेक्षा अनुभूति और [अन]ुभव के क्षेत्र में अधिक पूर्ण था। ये हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, फ़ारसी, बंगला तथा [अं]ग्रेजी आदि भाषाओं के साहित्य में प्रवेश रखते थे। इसका अर्थ यह नहीं कि [इन्ह]ोंने इन सब भाषाओं के साहित्य का व्यापक अध्ययन किया था, परन्तु इतना तो [अव]श्य ही है कि इन भाषाओं की कुछ रचनाओं को इन्होंने पढ़ा और उनकी चिंतन [त]था शैलीगत विशेषताओं का अनुभव किया। प्रतिभासम्पन्न कलाकार के लिए [इ]न से सम्पूर्ण का अनुमान तथा लेना कठिन कार्य नहीं। साहित्यिक अध्ययन से

ोश रहकर, निर्दिष्ट पथ पर बढ़ती है।"[1] किसी भी मान्यता को खींच खींचकर पुष्टि प्रदान करने की प्रवृत्ति इनके साहित्य में नहीं मिलती। भावना और ार की दृष्टि से इनका साहित्य रचना का उद्देश्य नितान्त स्पष्ट था, जिसमें द के लिए कोई स्थान नहीं था। लोक-भावना को व्यक्त कर लोक-कल्याण की ा में अपने साहित्य को अग्रसर करना-मात्र इस साहित्यकार का उद्देश्य था।

कहानी-कला के क्षेत्र में चरित्र-चित्रण की दिशा में 'कौशिक' जी बहुत ो नहीं बढ़ पाये परन्तु फिर भी कुछ आदर्श चरित्रों के निर्माण में इन्होंने सफलता ाप्त की है। जहाँ तक वर्णनात्मक शैली का सम्बन्ध है उसमें इन्हें असाधारण सफलता प्राप्त हुई है। कथोपकथन की मार्मिकता भी इनके साहित्य में यथास्थान दृष्टिगत होती है। 'कौशिक' जी ने जिस विषय को भी लिया है उसे ग्रहण करने में जितनी सफलता मिली है उससे कम उसकी कलात्मक अभिव्यक्ति में भी नहीं मिली।

'कौशिक' जी का स्थान अपने समय के सर्वश्रेष्ठ कहानीकारों में है। जिस उद्देश्य को लेकर इन्होंने कथा-साहित्य की रचना की उसे समकालीन कलाकारों ने अपनाया। अनुभूति और अनुभव का जो अध्ययन हमें 'कौशिक' जी के कथा-साहित्य में दृष्टिगोचर होता है वही मुन्शी प्रेमचन्द की कहानियों में उपलब्ध होता है। मुन्शी प्रेमचन्द ने ग्रामीण जीवन और राष्ट्रीय-चेतना के क्षेत्र में 'कौशिक' जी से आगे कदम रखा और ख्याति भी अधिक प्राप्त की, परन्तु यह तो स्वीकार करना ही होगा कि कथा-साहित्य के जिन मूल्यों का निर्धारण 'कौशिक' जी ने किया था केवल हिन्दी-कथा-क्षेत्र में मुन्शी प्रेमचन्द इनके बाद आए। भगवतीचरण वर्मा लिखते हैं—"हिन्दी के कथा-साहित्य के निर्माण में हिन्दी की जिन महान् और ऊँची विभूतियों का सबसे अधिक योगदान रहा है उनमें पंडित विश्वम्भर-नाथ 'कौशिक' का महत्वपूर्ण स्थान है।"[2] इसी प्रकार प्रो० वासुदेव जी के शब्दों में—"कौशिक जी वर्तमान हिन्दी-कहानी साहित्य के निर्माणकर्ताओं की सजीव शक्तियों में से एक थे।"[3]

उपर्युक्त उद्धरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि 'कौशिक' जी का कथा-साहित्य, हिन्दी साहित्य की वह निधि है जिसने एक महत्वपूर्ण अभाव की पूर्ति की। इनका कथा-साहित्य हिन्दी-साहित्य में दीपशिखा के समान प्रविष्ट हुआ और उसने अनुगामी लेखकों का मार्ग प्रदर्शित किया।

---

1 'हिन्दी कथा साहित्य'—... पृष्ठ १०६।
2 ... —भगवतीचरण वर्मा ... 'कौशिक', 'दो शब्द'—... ।
3 '... '—पृष्ठ १११।

सहायक ग्रन्थों की सूची

आधार-ग्रन्थ

१ ईश्वरीय दण्ड (कहानी-संग्रह)—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', प्रथमावृत्ति—१९२६
२ एप्रिल फूल „ „ „ १९३०
३ कल्लोल „ „ तृतीयावृत्ति—१९५८
४ 'कौशिक' जी की इक्कीस कहानियाँ (कहानी-संग्रह) प्रथमावृत्ति—१९५४
५ छोटा बेटा (कहानी-संग्रह) विश्वम्भरनाथ 'कौशिक' „ १९५६
६ चित्रशाला „ „ पंचमावृत्ति सं० २०१३वि०
७ जीत में हार „ „ प्रथमावृत्ति—१९५६
८ दुबे जी की चिट्ठियाँ — विजयानन्द दुबे
९ दुबे जी की डायरी — „ प्रथमावृत्ति—१९५८
१० पथ-निर्देश (कहानी-संग्रह)— विश्वम्भरनाथ 'कौशिक' „ १९५५
११ पेरिस की नर्तकी „ „ „ १९५८
१२ प्रतिशोध „ „ द्वितीयावृत्ति—१९५१
१३ प्रायश्चित „ „
१४ वन्ध्या „ „ प्रथमावृत्ति—१९५६
१५ रक्षा-बन्धन „ „ „ १९५६
१६ साध की होली „ „ „ १९५८

सहायक-ग्रन्थ

१ आधुनिक हिन्दी-साहित्य का विकास—डॉ० श्रीकृष्णलाल, १० मार्च १९४२
२ कहानी का रचना-विधान—डॉ० जगन्नाथप्रसाद शर्मा, द्वितीयावृत्ति—१९५१
३ कहानी और कहानीकार—प्रो० मोहनलाल जिज्ञासु प्रथमावृत्ति—१९५२
४ काव्य के रूप —गुलाबराय पंचमावृत्ति—१९५८
५ साहित्य-साधना के आधार—प्रो० दुर्गाशंकर मिश्र प्रथमावृत्ति—१९५१
६ हमारे लेखक—राजेन्द्रसिंह गौड़ प्रथमावृत्ति—सं० २०११
७ हिन्दी-कहानियों की शिल्पविधि का विकास—डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल, १९६०
हिन्दी-कहानी की रचना-प्रक्रिया—डॉ० परमानन्द श्रीवास्तव, फरवरी १९६५

९ हिन्दी कहानी शिल्प, इतिहास, आलोचना—डॉ० अष्टभुजा प्रसाद पाण्डेय, प्रथमावृत्ति—१९६६
१० हिन्दी कहानी—रामप्रकाश दीक्षित ,, १९६०
११ हिन्दी कहानी उद्भव और विकास—डॉ० सुरेश सिनहा ,, १९६७
१२ हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन—डॉ० ब्रह्मदत्त शर्मा मई १९५८
१३ हिन्दी कहानी और कहानीकार—प्रो० वासुदेव, द्वितीयावृत्ति—१९५७
१४ हिन्दी कहानियाँ [आलोचनात्मक अध्ययन]—श्री राजनाथ शर्मा, प्रथमावृत्ति—१९६१
१५ हिन्दी गद्य-गाथा—सद्गुरुशरण अवस्थी, प्रथमावृत्ति
१६ हिन्दी साहित्य [उसका उद्भव और विकास] —डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, १९५५
१७ हिन्दी साहित्य का इतिहास—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, षष्ठावृत्ति सं० २००७ वि०
१८ हिन्दी साहित्य और उसकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ—डॉ० गोविंदराम शर्मा, प्रथमावृत्ति—१९६१
१९ हिन्दी साहित्य का इतिहास—डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, षष्ठावृत्ति
२० हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास—रामबहोरी शुक्ल और डॉ० भागीरथ मिश्र, प्रथमावृत्ति १९५६

अंग्रेजी-पुस्तकें

1 Creative Technique in Fiction-Francis Vivian, 1946.
2 Short Story Writing—Charles Barret.
3 The craft of the Story—Maconohie, 1936.

हिन्दी-पत्र-पत्रिकाएं

१ चांद।
२ सरस्वती।
३ साहित्य-सन्देश।

(ज) "केवल पुरानी लकीर पीटने से काम नहीं चलता। मैं लकीर का [फकीर] नहीं हूं।"[1] (पाप का फल)

उक्त लोकोक्तियों तथा मुहावरों के अतिरिक्त 'कौशिक' जी ने यथास्थान [फ़ा]रसी और संस्कृत आदि के मुहावरे तथा लोकोक्तियों आदि का भी प्रयोग [किया] है तथा साथ ही उनका हिन्दी अर्थ दिया है, यथा—

"ओ ख्वेशतन गुमस्त केरा रहबरी कुनद'। जो खुद रास्ता भूला हुआ है [वह दू]सरों को रास्ता क्या बता सकता है।"[2]

'कौशिक' जी ने अपने कथा-साहित्य में अधिकांशत. वर्णनात्मक तथा नाटकीय [शैली] का प्रयोग किया है। इनके अतिरिक्त अनेक स्थलों पर मानव जीवन की [व्याख्या] तथा समाज पर व्यंग प्रस्तुत करने के लिए विवेचनात्मक, आवेशमयी, व्यंग्य [ात्मक] तथा प्रश्नोत्तर से युक्त शैलियों का सुन्दर प्रयोग इनकी कहानियों में उपलब्ध [होता] है। इनकी शैली के कुछ उदाहरण नीचे द्रष्टव्य हैं—

प्रश्नोत्तर से युक्त शैली—

"वे सच्चे सपूत कौन थे ? वे लोग थे—प्रिन्स-ग्राफ-ग्रारेंज, काउंट-रंसूर [और] कालूं। आह कालूं ? जिसने देश-प्रेम के आगे देश के प्रति अपने कर्त्तव्य, कर्त्तव्य [के आ]गे अपनी प्रेमिका को ठुकरा दिया—नहीं, उसका वध किया। क्यों वध [किय]ा ? इसलिए कि वही पतिघातिनी—वही देशद्रोहिणी तो उनकी सारी चेष्टाओं [पर] पानी फेर गई। वही कालूं—देश का चमकता हुआ रत्न!"[3] (देशभक्ति)

समास-गुम्फित संस्कृत-निष्ठ शैली—

"पाठक, आश्चर्य मत कीजिए, यह वही मलिना, धूलि-धूसरिता, जीर्ण-शीर्ण-[वस्त्र]ाच्छादिता, अर्द्ध-नग्ना, राम लाल की कन्या है।"[4] (परिणाम)

आवेशमयी शैली—

"हां ऐसा प्रतिद्वन्द्वी है, जैसा प्रतिद्वंद्वी मनुष्य को बड़े सौभाग्य से मिलता [है]। ऐसा प्रतिद्वन्द्वी है, जिस पर मनुष्य गर्व कर सकता है। यह ऐसा प्रतिद्वन्द्वी है

---

१. 'कल्लोल' [कहानी-संग्रह]—पृष्ठ २६।
२. 'प्रतिशोध' ,, ,, ८६।
३. 'कौशिक जी की श्रेष्ठ कहानियां'—पृ० ६।
४. 'साथ की होली' — [कहानी संग्रह]—पृ० ११।

कि ईश्वर उसको ऐसा ही अभिलाषी है। जब तक वह मेरे सामने रहा, उस
मेरी कविता की उत्पत्ति हुई।"[1] ([illegible])

विवेचनात्मक शैली—

"जो वस्तु मनुष्य को प्राप्त हो जाती है, उसका मूल्य, उसका महत्व, उस
हृदय में कुछ नहीं रहता, फिर वह चाहे कितनी मूल्यवान क्यों न हो चाहे कित
दुष्प्राप्य! मनुष्य सदैव उसी वस्तु की अभिलाषा में ठंडी सांसें भरता है, जो
प्राप्त नहीं, जो उसे नसीब नहीं, वह चाहे कितनी साधारण हो, चाहे कित
मामूली हो। एक लखपती मनुष्य के लिए हजार-दो हजार रुपये कोई चीज नहीं
क्यों? इसलिए कि रुपये उसके पास हैं, उसे प्राप्त हैं। परन्तु जिसके पास दो रु
भी नहीं, उसके लिये दो हजार न्यामत हैं, क्योंकि उसके लिये दुष्प्राप्य है। संसा
का यही नियम है, यही चलन है।"[2] (पथ-निर्देश)

'कौशिक' जी की विवेचनात्मक शैली में वर्णनात्मक शैली की अपेक्षा अधि
प्राञ्जलता तथा गंभीरता है। प्रश्न और उदाहरणों के द्वारा तर्कों की पुष्टि की गई
है जिससे भाषा सशक्त हो गई है।

'कौशिक' जी की भाषा शैली अत्यन्त सशक्त, प्राणवान तथा प्रवाहमयी है।
स्वाभाविक बोलचाल की भाषा-शैली में इन्होंने अपने कथा-साहित्य की रचना की
है। राजेन्द्रसिंह गौड़ के शब्दों में—"भाषा और शैली की दृष्टि से भी उनकी समस्त
रचनाएँ हिन्दी की अमूल्य निधि हैं।"[3]

'कौशिक' जी के कथा-साहित्य के उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि
इनकी कहानियों का रचना-विधान कुछ दोषों के होने पर भी सर्वथा सुसंगठित एवं
सुन्दर है। इनकी कहानियों के कथानक स्वाभाविक गति से आरम्भ, मध्य तथा चरम-
सीमा से विकसित होते हुए पर्यवसान की ओर बढ़ते हैं। चरित्र-चित्रण की दृष्टि से
इनकी कहानियाँ प्रारम्भिक कहानी-कला का आभास देती हैं। कथोपकथनों का
सौंदर्य इनकी कहानियों में सर्वत्र विद्यमान है। वातावरण का चित्रण 'कौशिक' जी

---

१. 'साध की होली' [कहानी-संग्रह]— पृष्ठ ७२।
२. पथ-निर्देश [कहानी-संग्रह]— पृ० १८।
३. [illegible] —पृ० ३३८।

। कहानियों में प्रस्तुत युग एवं समाज की दृष्टि से किया है। इनकी कहानियों का
द्देश्य प्रेमचन्द की तरह आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की स्थापना ही रहा है। भाषा-
ली सर्वथा कहानियों के पात्रों तथा समस्याओं आदि के उपयुक्त है। 'कौशिक' जी
ी कहानी-कला प्रेमचन्द की कहानी कला के सदृश ही है। अति-आधुनिक कथा-
िल्प की दृष्टि से 'कौशिक' जी की कहानियों का मूल्यांकन करते हुए उसमें दोषो
ाओं की खोज करना अनावश्यक तथा अनुपयुक्त है। अपने युग की कहानी-
रचना-विधान की दृष्टि से इनकी कहानियाँ उत्तम कोटि की हैं। हिन्दी-
ा के विकास में इनकी कहानियों का महत्त्व सर्वोपरि है।

पंचम अध्याय

मूल्यांकन

'कौशिक' जी युग-द्रष्टा साहित्यकार थे। समकालीन समाज-सुधारवादी विचारधारा इनके सम्पूर्ण कथा-साहित्य का मूल-स्रोत रही है जिसकी कसौटी पर कहानीकार ने अपने मस्तिष्क के अन्तर्गत उभरकर आने वाली प्रत्येक समस्या का विश्लेषण किया, चित्रांकन किया और अन्त में उसे आदर्श की दिशा प्रदान की। यथार्थ के आधार पर इन्होंने आदर्श की कल्पना की है। जिन घटनाओं तथा पात्रों को ग्रहण किया है वे यथार्थ जीवन से सम्बन्धित हैं परन्तु उद्देश्य उनका आदर्शवादी रहा है, इसे भारतीय परम्परा का स्पष्ट प्रभाव कहना ही उचित होगा। सुधारात्मक प्रवृत्ति के प्रवेश तथा रूढ़िवादी परम्पराओं के खण्डन की प्रवृत्ति को मूल-भावना के आधार पर 'कौशिक' जी ने अपने साहित्य की पृष्ठभूमि तैयार की और इसी को लेकर साहित्य-सृजन की दिशा में कदम बढ़ाया। युग-चेतना के एकतामूलक, राष्ट्रवादी, सुधारवादी तथा रूढ़िवादी जितने भी तत्व थे उन सभी का इनकी रचनाओं में यत्र-तत्र समावेश मिलता है। अपने समकालीन समाज की अनेक कुरीतियों पर व्यंग्यपूर्ण शैली में कुठाराघात किया है। देवीप्रसाद धवन 'विकल' ने आपके विषय में लिखा है—"स्व० कौशिक जी समाज-सुधारक थे तथा जीवन के प्रत्येक पहलू को सुलझी हुई दृष्टि से देखने के आदी थे।"[1]

समयुगीन साहित्यिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय चेतना को 'कौशिक' जी ने अपने साहित्य में समाविष्ट किया और अहिंसावादी, साम्यवादी तथा प्रगतिवादी इत्यादि अनेक विचारधाराओं के जन-जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव की अभिव्यक्ति अपनी कहानियों में की। गांधीवादी अहिंसावादी विचारधारा से प्रभावित पात्र अपनी अहिंसा के बल पर हिंसा पर विजय प्राप्त करते हैं। इस विचार-धारा के अन्तर्गत धार्मिक सहिष्णुता की कल्पना करते हुए 'कर्त्तव्य-पालन' कहानी में कहा है, "यह तो जाहिर बात है कि मजहबी तास्सुब ही इन झगड़ों की बुनियाद है।...' वे

---

१. 'दुबे जी की डायरी' - [illegible] —देवीप्रसाद धवन।

ही लोग आपस में झगड़ा कराने की कोशिश करते हैं।"[1] अन्तिम वाक्य में लेखक ने झगड़ा कराने वालों के प्रति घृणा का भाव व्यक्त किया है। साम्यवादी सिद्धान्तों से प्रभावित पात्रों का चरित्र प्रस्तुत करते हुए 'कौशिक' जी ने उनके जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में साम्य रखने पर व्यंग प्रस्तुत किया है।[2] इसी प्रकार इनके प्रगतिवादी विचारधारा से प्रभावित पात्र जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रगति की आकांक्षा करते हैं यहाँ तक कि 'होली' आदि त्योहारों में भी प्राचीन रीति-रिवाजों का परित्याग तथा नवीन रीति को अपनाना उन्हें अभीष्ट है।[3]

'कौशिक' जी ने अपने साहित्यिक उद्देश्य की पूर्ति तथा भावनाओं और विचारों की अभिव्यक्ति के लिए विशेष रूप से कथा-साहित्य को माध्यमस्वरूप चुना और उसमें अनेक प्रकार के मौलिक प्रयोग प्रस्तुत किये। इनसे पूर्व-कथा-साहित्य के अन्तर्गत तिलस्म तथा ऐय्यारी से सम्बन्धित विषयों की प्रधानता रहती थी तथा उद्देश्य केवल मनोरंजन और कुत्सित आकर्षण मात्र था। मानव-जीवन का मार्मिक विश्लेषण, सामाजिक समस्याओं का उद्घाटन तथा लोक-जीवन के रहस्यों का कथा-साहित्य में समावेश नहीं हुआ था। वास्तविकता यह थी कि पूर्वकालीन कहानीकारों ने साहित्य के मनोरंजन के अतिरिक्त किसी अन्य प्रयोजन के विषय में कभी सोचा ही नहीं था। 'कौशिक' जी ने जिस समय इस विधा को अपनाया, यह नितान्त अपरिपक्वावस्था में थी। श्री राजेन्द्रसिंह गौड़ ने लिखा है—"उन्होंने हिन्दी में उस समय प्रवेश किया था जब उसके कथा-साहित्य की सीमाएँ अनिश्चित थीं और उसकी कला का समुचित विकास नहीं हुआ था। उसमें न तो जीवन की झलक थी, न उसकी समस्याओं का चित्रण। आकर्षण की सामग्री रहते हुए भी जीवन-निर्माण की शक्ति उसमें नहीं थी। ऐसी दशा में 'कौशिक' जी को अपनी प्रतिभा के

---

१. 'चित्रशाला' भाग—२, पृ० १२४।
२. "यदि आप कविता दो बार पढ़वायेंगे तो व्याख्या भी दो बार किये जायेंगे।"
"अकवियों पर यह नियम लागू नहीं होता।" मन्त्री जी बोले।
"होना चाहिए। अन्यथा कम्यूनिज़्म [illegible]
चाहिये।" (कम्यूनिस्ट कथा)—'रक्षा-बन्धन' [द्वि० सं०] पृ० ११९।
३. "प्रगतिशील साहित्यकार के [illegible] बोले—"इस बार होली में कुछ नवीनता होनी चाहिए। पुराने ढंग से, बड़ा पुराना हो गया [illegible]।"
"आप तो होली का त्यौहार [illegible] नहीं है।" [illegible]
—'रक्षा-बन्धन' [प्र० सं०]—पृ० ८१।

विकास के लिए यथेष्ट परिश्रम करना पड़ा।"[1] 'कौशिक' जी ने सर्वप्रथम सामाजिक मनोवृत्ति के सुधार की दिशा में नवीन लक्ष्य स्थापित किया तथा समाज के निम्न, मध्य तथा उच्च सभी प्रकार के पात्रों का यथार्थ चित्र उपस्थित किया। इस चित्रण में यत्र-तत्र मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भी बहुत महत्त्वपूर्ण हो उठा है। मानव की अनेक प्रवृतियों का 'कौशिक' जी ने सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत किया है, जैसे—

(क) "मनुष्य प्रत्येक दशा में अपने हृदय की सांत्वना का आधार ढूंढ लेता है। अत्यन्त कष्ट तथा दुःख में फंसा हुआ मनुष्य भी कोई न कोई ऐसी बात ढूंढ लेता है। जिसका आश्रय लेकर वह सारे कष्टों को भोल लेता है। मनुष्य का यह स्वभाव है, उसकी प्रकृति है। यदि ऐसा न होता तो मनुष्य का जीवित रहना कठिन हो जाता।"[2] (संतोष-धन)

(ख) "मनुष्य चाहे जितना स्वार्थी, हठधर्मी, क्रोधी तथा अत्याचारी हो परन्तु निर्भीकता-पूर्वक कही हुई सच्ची और सीधी बात उसके हृदय पर प्रभाव अवश्य डालती है, चाहे वह एक क्षण ही के लिए क्यों न हो।"[3] (सच्चा कवि)

विषय के अतिरिक्त शैली के क्षेत्र में भी 'कौशिक' जी ने मौलिक प्रयोग प्रस्तुत किये। इनसे पूर्व-कथा-साहित्य में वर्णनात्मक शैली ही विशेष रूप से प्रयुक्त होती थी। 'कौशिक' जी ने सर्वप्रथम हिंदी कथा-साहित्य में संवादात्मक शैली का प्रयोग किया। हम इनके उन चुटीले व्यंग्यात्मक प्रयोगों को भी नहीं भुला सकते जिनके द्वारा सामाजिक कुरीतियों की आलोचना की गई है। दुबे जी की चिट्ठियों को यदि कहानी-साहित्य का ही एक रूप मान लिया जाये तो वह भी इनका संतोषित-मौलिक प्रयोग ही है।

'कौशिक' जी एक सहृदय व्यक्ति थे। किसी विषय में प्रवेश प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम सहृदयता की ही आवश्यकता होती है, जिसके माध्यम से साहित्यकार 'अन्य' (समाज, व्यक्ति, प्रकृति, समस्या, विचार तथा स्वभाव) से सामञ्जस्य स्थापित करता है। सहृदय व्यक्ति दूसरे के मन की भावनाओं आकांक्षाओं और विचारों में प्रवेश करता है, तभी उसका ज्ञान 'अन्य' के विषय में निश्चित आधार धारण करता है। 'कौशिक' जी ने अपनी कला-सृजन-प्रक्रिया के लिए जिन पात्रों तथा विषयों का चयन किया उनके साथ पूर्ण सहृदयता तथा सहानुभूति के साथ निर्वाह

---

१. 'हमारे लेखक'—पृ० ३३०।
२. 'ताश का हार्ता' [क०-सं०]—पृ० ३७।
३. " " पृ० ६६।

किया। किसी विषय पर चलाऊ संकेत मात्र कर देना इनके साहित्य का लक्ष्य नहीं था। अपने कथा-साहित्य के अन्तर्गत इन्होंने विशेष रूप से नागरिक परिवार तथा उसकी समस्याओं का चित्रण किया। परिवार ही जाति, समाज अथवा राष्ट्र की छोटी से छोटी इकाई है। इस छोटे क्षेत्र में हम 'कौशिक' जी का जीवन उन पात्रों के साथ घुल-मिलकर एक हो गया है। इसी सहृदयता ने लेखक की विषय-ग्राह्यता को पूर्णता प्रदान की।

विषयग्राह्यता का सम्बन्ध लेखक की प्रतिभा, अध्ययन, अनुभव, अनुभूति तथा कल्पना आदि सभी तत्वों के साथ रहता है। रचनात्मक विषय का, अध्ययन द्वारा यह पूर्ण ज्ञान रखने पर ही प्रतिभावान साहित्यकार अपने अभीष्ट विषय के साथ समुचित न्याय कर सकता है। भाषा—सौष्ठव, तथा शैलीगत नवीन प्रयोगों द्वारा यह संभव हो सकता है कि वह अपरिपक्व मस्तिष्क वाले पाठकों का अल्प मनो-रंजन कर सके अथवा उनकी जिज्ञासापूर्ति में सहायक हो सके, परन्तु अध्ययनशील पाठक की जिज्ञासापूर्ति उस लेखक के द्वारा संभव नहीं जिसने उस विषय को पूर्णतया ग्रहण नहीं कर लिया हो जिसे उसने रचनाबद्ध किया। अध्ययन के अतिरिक्त उस विषय से सम्बन्धित कुछ न कुछ अनुभव प्राप्त साहित्यकार अपनी रचना को अधिक सफल बना सकता है। अध्ययन और अनुभव से प्राप्त ज्ञान की रिक्तता को पूर्ण करने के लिए कल्पना तथा अनुभूति की आवश्यकता होती है। ये दोनों असीमित क्षेत्र में विचरण करती हैं। अनुभूति का सम्बन्ध लेखक की उस विशेष प्रतिभा से है जिसके द्वारा वह अप्रस्तुत को प्रस्तुत करता है। इसके साथ उसकी कल्पनाशक्ति का सहयोग रहता है तथा चिन्तन इसे पुष्टि प्रदान करता है। अध्ययन मुख्यतः भूतकाल का ज्ञान कराता है, अनुभव वर्तमान स्थिति का स्पष्टीकरण करता है तथा अनुभूति भविष्य की कल्पना से भूत और वर्तमान के साथ सामञ्जस्य स्थापित करती है। इस प्रकार सहृदयतापूर्वक अध्ययन, अनुभव और अनुभूति द्वारा विषय का सर्वाङ्गीण चित्रण प्रस्तुत करना संभव होता है।

'कौशिक' जी का अध्ययन, साहित्यिक अध्ययन की अपेक्षा अनुभूति और अनुभव के क्षेत्र में अधिक पूर्ण था। ये हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, फ़ारसी, बंगला तथा अंग्रेजी आदि भाषाओं के साहित्य में प्रवेश रखते थे। इसका अर्थ यह नहीं कि इन्होंने इन सब भाषाओं के साहित्य का व्यापक अध्ययन किया था, परन्तु इतना तो निश्चय ही है कि इन भाषाओं की कुछ रचनाओं को इन्होंने पढ़ा और उनकी चिंतन तथा शैलीगत विशेषताओं का अनुभव किया। प्रतिभासम्पन्न कलाकार के लिए कुछ से सम्पूर्ण का अनुमान लगा लेना कठिन कार्य नहीं। साहित्यिक अध्ययन से

मात्र इतनी ही उपलब्धि 'कौशिक' जी ने ग्रहण की, जिसका प्रभाव इनके साहित्यिक दृष्टिकोण, चिन्तन तथा शैलीगत रचना-विधान पर पड़ा।

'कौशिक' जी के साहित्य का परिशीलन करने के पश्चात् यह स्पष्ट हो जाता है कि उनकी रचना में कहानीकार के अनुभूति तथा अनुभव तत्त्व ही प्रधान रहे, जिनके आधार पर समयुगीन समाज तथा परिवार का चित्र अंकित किया गया। इनके अन्तर्गत 'कौशिक' जी ने समाज के प्रतिनिधि पात्रों को लेकर चरित्र-चित्रण द्वारा जो सजीव चित्र उपस्थित किये हैं वे हिन्दी-साहित्य की अमूल्य निधि बनकर रह गए हैं। उनमें लेखक ने यथार्थ को झुठलाया नहीं है तथा आदर्श को भुलाया नहीं। 'कौशिक' जी ने समाज के विविध क्षेत्रों में झाँककर देखा है। जिस विषय को भी इन्होंने ग्रहण किया है, उसके पक्ष तथा विपक्ष का समुचित मूल्यांकन प्रस्तुत किया; जिस पात्र को लिया है, उसके दोनों पहलुओं पर प्रकाश डाला है और जिस समस्या को उठाया है उसका सहानुभूतिपूर्ण विवेचन करते हुए, उसके समाधान का प्रयत्न किया है। 'कौशिक' जी अनुभूति के धनी थे। अध्ययन, अनुभव तथा अनुभूति का माध्यम प्राप्त कर ये जिस कथा-साहित्य की रचना में प्रविष्ट हुए उसने हिन्दी कथा-साहित्य को गौरवान्वित किया। इनकी प्रतिभा का मूल आधार यह अनुभूति थी, जिसने विषय की ग्राह्यता को पूर्णता प्रदान की।

अध्ययन, अनुभव तथा अनुभूति के आधार पर लेखक जिस विषय को ग्रहण करता है, उसे रचनाबद्ध करने से पूर्व चिन्तन की आवश्यकता होती है। चिन्तन का अर्थ है विषय को विचार की कसौटी पर कसना। उचित और अनुचित का ज्ञान चिन्तन से ही प्राप्त होता है। विषय को ग्रहण करने के पश्चात् उसमें क्या त्याज्य है और क्या ग्रहणीय, इसका निर्णय चिन्तन द्वारा ही किया जाता है। 'कौशिक' जी ने अपने कथा-साहित्य में केवल मनोरंजन को ही लक्ष्य नहीं बनाया। इनके लेखन की एक निर्धारित दिशा थी, जिसकी पूर्ति के लिए इन्होंने एक [illegible] [illegible] का चयन किया। लेखक की यह प्रवृत्ति सिद्ध करती है कि उसने जो कुछ भी रचनाबद्ध किया, उसकी पृष्ठभूमि में चिन्तन का विशेष स्थान था।

'कौशिक' जी का दृष्टिकोण रूढ़िवादी न होकर प्रगतिवादी था। समाज के परिवर्तनों के प्रति इनका चेतन मानस पूर्ण रूप से जागृत था। इन्होंने अपने साहित्य में समकालीन रूढ़िवादी परम्पराओं पर [illegible] प्रहार किए हैं और [illegible] [illegible] भाषा को पुष्ट कर समाज के यथार्थवादी चित्र प्रस्तुत किये हैं। श्री [illegible] ने इनके विषय में लिखा है—"कौशिक जी की [illegible] [illegible] [illegible] भी [illegible] देखती हुई, [illegible] की [illegible]

के भीतर रहकर, निर्दिष्ट पथ पर बढ़ती है।"[1] किसी भी मान्यता को आँख मीचकर स्वीकृति प्रदान करने की प्रवृत्ति इनके साहित्य में नहीं मिलती। भावना और विचार की दृष्टि से इनका साहित्य रचना का उद्देश्य नितान्त स्पष्ट था, जिसमें भ्रम के लिए कोई स्थान नहीं था। लोक-भावना को व्यक्त कर लोक-कल्याण की दिशा में अपने साहित्य को अग्रसर करना-मात्र इस साहित्यकार का उद्देश्य था।

कहानी-कला के क्षेत्र में चरित्र-चित्रण की दिशा मे 'कौशिक' जी बहुत आगे नहीं बढ़ पाये परन्तु फिर भी कुछ आदर्श चरित्रों के निर्माण में इन्होंने सफलता प्राप्त की है। जहाँ तक वर्णनात्मक शैली का सम्बन्ध है उसमे इन्हें असाधारण सफलता प्राप्त हुई है। कथोपकथन की मार्मिकता भी इनके साहित्य में यथास्थान उपलब्ध होती है। 'कौशिक' जी ने जिस विषय को भी लिया है उसे ग्रहण करने मे जितनी सफलता मिली है उससे कम उसकी कलात्मक अभिव्यक्ति में भी नहीं मिली।

'कौशिक' जी का स्थान अपने समय के सर्वश्रेष्ठ कहानीकारों में है। जिस उद्देश्य को लेकर इन्होंने कथा-साहित्य की रचना की उसे समकालीन कलाकारों ने अपनाया। अनुभूति और अनुभव का जो अध्ययन हमें 'कौशिक' जी के कथा-साहित्य में दृष्टिगोचर होता है वही मुन्शी प्रेमचन्द की कहानियों मे उपलब्ध होता है। मुन्शी प्रेमचन्द ने ग्रामीण जीवन और राष्ट्रीय-चेतना के क्षेत्र मे 'कौशिक' जी से आगे कदम रखा और ख्याति भी अधिक प्राप्त की, परन्तु यह तो स्वीकार करना ही होगा कि कथा-साहित्य के जिन मूल्यों का निर्धारण 'कौशिक' जी ने किया उन्हें लेकर हिन्दी-कथा-क्षेत्र मे मुन्शी प्रेमचन्द इनके बाद आए। भगवतीचरण वर्मा लिखते हैं—"हिन्दी के कथा-साहित्य के निर्माण मे हिन्दी की जिन महान् और यशस्वी विभूतियों का सबसे अधिक योगदान रहा है उनमें पंडित विश्वम्भर-नाथ कौशिक का महत्त्वपूर्ण स्थान है।"[2] इसी प्रकार प्रो० वासुदेव जी के शब्दों में—"कौशिक जी वर्तमान हिन्दी-कहानी साहित्य के निर्माणकर्ताओं की सजीव शक्तियों में से एक थे।"[3]

उक्त उद्धरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि 'कौशिक' जी का कथा-साहित्य, हिन्दी साहित्य की वह निधि है जिसने एक महत्त्वपूर्ण अभाव की पूर्ति की। इनका कथा-साहित्य हिन्दी-साहित्य में दीपशिखा के समान प्रविष्ट हुआ और उसने अनुगामी लेखकों का मार्ग प्रकाशित किया।

---

१ 'हिन्दी गद्य गाथा'—सद्गुरुशरण अवस्थी, पृष्ठ-१०६।

२ 'कौशिक जी की सर्वोत्तम कहानियाँ'—संकलनकर्त्ता पीताम्बरनाथ 'कौशिक', 'दो शब्द'—भगवती-चरण वर्मा।

३ 'हिन्दी कहानी और कहानीकार'—पृष्ठ १११।

सहायक ग्रन्थों की सूची

आधार-ग्रन्थ

१ ईश्वरीय दण्ड (कहानी-संग्रह)—विश्वम्भरनाथ 'कौशिक', प्रथमावृत्ति—१९५९
२ एप्रिल फूल „ „ „ १९६०
३ कल्लोल „ „ तृतीयावृत्ति—१९५८
४ 'कौशिक' जी की इक्कीस कहानियाँ (कहानी-संग्रह) प्रथमावृत्ति—१९५४
५ खोटा बेटा (कहानी-संग्रह) विश्वम्भरनाथ 'कौशिक' „ १९५९
६ चित्रशाला „ „ पंचमावृत्ति सं० २०१३वि०
७ जीत में हार „ „ प्रथमावृत्ति—१९५९
८ दुबे जी की चिट्ठियाँ — विजयानन्द दुबे
९ दुबे जी की डायरी — „ प्रथमावृत्ति—१९५७
१० पथ-निर्देश (कहानी-संग्रह)— विश्वम्भरनाथ 'कौशिक' „ १९५५
११ पेरिस की नर्तकी „ „ „ १९५७
१२ प्रतिशोध „ „ द्वितीयावृत्ति—१९५१
१३ प्रायश्चित्त „ „
१४ रक्षा „ „ प्रथमावृत्ति—१९५६
१५ रक्षा-बन्धन „ „ „ १९५९
१६ सार की होली „ „ „ १९५०

सहायक-ग्रन्थ

१ आधुनिक हिन्दी-साहित्य का विकास—डॉ० श्रीकृष्णलाल, १० मार्च १९५२
२ कहानी का रचना-विधान—डॉ० जगन्नाथप्रसाद शर्मा, द्वितीयावृत्ति—१९५१
३ कहानी और कहानीकार—प्रो० मोहनलाल जिज्ञासु प्रथमावृत्ति—१९५२
४ काव्य के रूप —गुलाबराय प्रथमावृत्ति—१९५४
५ साहित्य-साधना के आधार—प्रो० दुर्गाशंकर मिश्र प्रथमावृत्ति—१९५५
६ हमारे लेखक—राजेन्द्रसिंह गौड़ प्रथमावृत्ति—सं० २०११
७ हिन्दी-कहानियों की शिल्पविधि का विकास—डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल, १९६०
८ हिन्दी-कहानी की रचना प्रक्रिया—डॉ० परमानन्द श्रीवास्तव, फरवरी १९६५

९ हिन्दी कहानी शिल्प, इतिहास, ग्रालोचना—डॉ० ग्रष्टभुजा प्रसाद पाण्डेय, प्रथमावृत्ति—१९६६
१० हिन्दी कहानी—रामप्रकाश दीक्षित ,, १९६०
११ हिन्दी कहानी उद्भव ग्रौर विकास—डॉ० सुरेश सिनहा ,, १९६७
१२ हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक ग्रध्ययन—डॉ० ब्रह्मदत्त शर्मा मई १९५८
१३ हिन्दी कहानी ग्रौर कहानीकार—प्रो० वासुदेव, द्वितीयावृत्ति—१९५७
१४ हिन्दी कहानियाँ [ग्रालोचनात्मक ग्रध्ययन]—श्री राजनाथ शर्मा, प्रथमावृत्ति—१९६१
१५ हिन्दी गद्य-गाथा—सद्गुरुशरण ग्रवस्थी, प्रथमावृत्ति
१६ हिन्दी साहित्य [उसका उद्भव ग्रौर विकास] —डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, १९५५
१७ हिन्दी साहित्य का इतिहास—ग्राचार्य रामचन्द्र शुक्ल, षष्ठावृत्ति सं० २००७ वि०
१८ हिन्दी साहित्य ग्रौर उसकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ—डॉ० गोविंदराम शर्मा, प्रथमावृत्ति—१९६१
१९ हिन्दी साहित्य का इतिहास—डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, षष्ठावृत्ति
२० हिन्दी साहित्य का उद्भव ग्रौर विकास—रामबहोरी शुक्ल ग्रौर डॉ० भागीरथ मिश्र, प्रथमावृत्ति १९५६

ग्रंग्रेजी-पुस्तकें

1 Creative Technique in Fiction-Francis Vivian, 1946.
2 Short Story Writing—Charles Barret.
3 The craft of the Story—Maconobie, 1936.

हिन्दी-पत्र-पत्रिकाएँ

१ चाँद।
२ सरस्वती।
३ साहित्य-सन्देश ।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९	२३	जन्म १८६१	जन्म सन् १८६१
२२	१६	मुहावरों	मुहावरों
२४	४	में	में
२४	फुट नोट्स २, ३,	डा०	डॉ०
२७	११	इतिवृत्ति	इतिवृत्त
२७	फुट नोट २	पृ० ३७२	पृ० ६७२
३५	फुट नोट १	'चित्रशाला' [क० सं०] .. पृष्ठ ४५—१०१	'प्रतिशोध' [क०-सं०] .. पृष्ठ ८५—१०१
३५	फुट नोट २	'प्रतिशोध' [क०-सं०]	'चित्रशाला' [क०-सं०]
३७	६	दुरपयोग	दुरुपयोग
३६	१०	व्यन्जित	व्यञ्जित
३६	फुट नोट २	हृदय पृष्ट	हृदय-पृष्ठ
३६	फुट नोट २	हुआ जाता है, फिर भी	हुआ जाता है, ···फिर भी
४०	फुट नोट १	पृष्ठ ३३६	पृष्ठ ३३८
५०	७	वह प्रतिमा	वह प्रतिमा
५३	५	घृणा	घृणा
५३	फुट नोट १	बह्मानिधी	पद्मानिधी
६७	५	होना चाहिये ।	होना चाहिये ।'
७२	१५, २८	परमोत्कर्ष	धर्मोत्कर्ष
९१	८	महत्तव	महत्त्व